प्रकाशक

बृहद् (वड) गच्छीय श्रीपूज्य जैनाचार्य

श्रीचन्द्रसिंहसूरीश्वर शिष्य

पण्डित काशीनाथ जैन

कलकत्ता

२०१ हरिसन रोड के "नरसिंह प्रेस" में

मैनेजर पण्डित काशीनाथ जैन

द्वारा मुद्रित।

(प्रथमवार २०००) सन् १९२३ (मूल्य ॥=)

प्राक्कथन

आज हमें आनन्द होता है, कि हमारे प्रेमी पाठकों की सेवामें हम अपनी यह दूसरी पुस्तिका उपस्थित करते हैं। आशा है, पाठको ने जैसे हमारी "चन्दनबाला" नामक पहली पुस्तक को सप्रेम अपनाया है, वैसे इसे भी अपनायेंगे। स्थान की उपयोगीता देख कर चन्दनबाला के अनुसार इस पुस्तक में भी हमने छ हॉफटोन चित्र दिये हैं। आशा है हमारा यह परिश्रम पाठकों को प्रिय प्रतीत होगा।

इस पुस्तकमें हमारे चरित्र नायक,सुश्रावक परम प्रतापी सेठ सुदर्शनजी हैं, उन्हींके जीवनकालकी प्रभावशाली घटनाओं का उल्लेख किया गया है, ब्रह्मचर्य व्रतकी पालना करने के लिये सेठजीनें अनेकानेक घोरातिघोर विप-

त्तियें सहलीं; यहाँ तक की स्वयमेव धैर्यधारणाकर शूलिपर चढ़गये, शेषमें शीलके अद्भुत गुणोंने ही सेठजी की जय बोल दी। अहा! शीलभी एक अप्रतीम वस्तु है, जिसके सेवनसे पशुके सामान मनुष्य में भी अद्भुत शक्ती का सञ्चार हो जाता है। शीलके उपासकको देव दानव भी सिर झुकातें हैं, यहाँ तक की इसकी उपासनासे मनुष्य मोत्तप्रासी कि कामयावी पुरी कर सक्ता है। इसी बातको सुदर्शन सेठजीने अपने जीवन में प्रत्यत्त करके दिखा दी है, एसे महा पुरुषों को धन्य है।

इस पुस्तकके प्रुफ शोधने में बाबू माणकचंद दूगड़ने जो अपना परिश्रम प्रदान किया है, उसके लिये हम उन्हें साधुवाद देते हैं। इस पुस्तकमें दृष्टी दोषसे वा प्रमादके कारण कहीं किसी स्थान पर अशुद्धि रह गई हो तो पाठक गण त्तमा करें।

ता० १५-११-२२
"नरसिंह प्रेस"
२०१ हरिसन रोड, कलकत्ता।

भवदीय—
काशीनाथ जैन।

सुदर्शन-सेठ

पहला परिच्छेद

पूर्व-भव

(नवकार-मन्त्रका प्रभाव)

परम प्रसिद्ध आर्य-देशमें प्रख्याति पाये हुए अङ्गदेश के भूषणके समान चम्पानगरीमें इन्द्रके समान तेजस्वी और पराक्रमी दधिवाहन नामके राजा राज्य करते थे। उनकी पटरानीका नाम अभया था, जो रूपमें रतिको भी लज्जित करनेवाली तथा इन्द्राणीका अनुकरण करनेवाली थी। उसी नगरमें राजासे मान-आदर पाये हुए और आर्हत-धर्मके उपासक ऋषभदास नामके एक सेठ भी रहते थे। उनकी पत्नी-

का नाम अर्हद्दासी था। वह सती, श्राविका-रत्न और पति-व्रता थी। उनके सुभग नामका एक नौकर था, जो उनकी गाय-भैंसोंको जंगलमें चरानेके लिये ले जाता और घरके और सब काम-धन्धे भी किया करता था।

एक दिन माघकी कनकनाती हुई ठंढमें जंगलसे लौटते समय उसने रास्तेमें एक स्थानपर किसी मुनिको परमात्माके ध्यानमें एकाग्र-चित्त होकर लीन बने हुए, कायोत्सर्ग करके टिके हुए तथा वस्त्ररहित शरीरके साथ देखा। मुनिकी प्रशान्त मुद्रा और अकिञ्चन भाव देखकर सुभगको बड़ा आश्चर्य हुआ। मालिकके घर जल्दी पहुँचना था, इसीलिये उस समय वह मुनिकी साक्षात् सेवा करनेका लोभ नहीं उठा सकता था। तो भी उसने राह चलते-चलते अपने मनमें सोचा,—"अहा! इन महात्माओंका जीवन भी धन्य है! ऐसे-ही-ऐसे नर-रत्नोंको उत्पन्न करनेके कारण यह पृथ्वी रत्न-गर्भा कहलाती है। इन्हें न अपनी देहकी सुध है, न दुनियाँकी परवा और न मोह-मदिराका मद! ये गरमी--सर्दीको एकसाँ समझते हुए निश्चिन्तताके साथ जीवन व्यतीत करते हैं। इनकी मुख-मुद्रा सदा सुधाकरकी अपेक्षा भी अधिक शीतल होती है। इनकी एकाग्र वृत्ति और ध्यान-लीनता सचमुच आसन्न सिद्धिकी सूचना दिया करती है।"

यही सब सोचता-विचारता हुआ वह घर पहुँचा। रातको सोने पर भी वह इसी विचारमें लीन रहा, कि कब सवेरा हो और मैं चलकर उन मुनि महाराजके दर्शन करूँ। इसी सोच-

सुदर्शन सेठ

इतने में सूर्योदय हुआ और मुनि महाराज, अपना ध्यान सम्पूर्ण कर "ॐ नमो अरिहंताणं" इस मन्त्रका उच्चारण कर, आकाश मार्गमें उड़ चले। यह अद्भुत लीला देखकर उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

(पृष्ठ ३)

Narsingh Press. Calcutta.

विचारमें पड़े रहनेके कारण उसे चार पहरोंकी रात चौवीस पहरोंकी मालूम पड़ने लगी। किसी-किसी तरह उसने तारे गिन-गिन कर रात वितायी और सवेरा होते ही झटपट भैंसोंको चराने के लिये जंगलकी ओर ले चला। इस बार भी उसने उसी स्थानपर उसी स्थितिमें पड़े हुए मुनिको देखा। मुनिवरके अलौकिक तेजसे तो वह पहली ही वार अचम्भेमें आ गया था। अबके उनके दर्शन होते ही उसने उन्हें प्रणाम किया और थोड़ी देर उनके सामने बैठा रहा। इतनेमें सूर्योदय हुआ और मुनि महाराज, अपना ध्यान सम्पूर्ण कर 'ॐ नमो अरिहंताणं' इस मन्त्रका उच्चारण कर, आकाश-मार्गमें उड़ चले। यह अद्भुत-लीला देखकर उसके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। उसने सोचा,—"मालूम होता है, कि यही आकाश-गामिनी विद्याका मन्त्र है और इसीके प्रभावसे मुनि महाराज आसमानमें उड़ सके हैं।" यह सोच, उस मन्त्रको सच्चे मोतियोंके हारसे भी अधिक बहुमूल्य समझकर उसने अपने हृदयमें धारण कर लिया और उस दिनसे निरन्तर उस मन्त्रका जाप करने लगा।

एक दिन सेठने उसे इस मन्त्रका उच्चारण करते हुए सुनकर उसे अपने पास बैठाकर कहा,—"सुभग! तुम यह न समझना, कि यह केवल आकाश गामिनीका ही मन्त्र है। यह महामन्त्र स्वर्ग और मोक्षका भी दाता है। इसलिये तुम इसे खूब यत्नसे स्मरण करते हुए अपने सुभग नामको सार्थक करो। इस मन्त्रके प्रभावका कोई एक मुखसे वर्णन नहीं कर सकता। कल्प-

वृक्ष, चिन्तामणि, कामकुम्भ और पारस-मणि भी इस मन्त्रके प्रभावके आगे लज्जित होकर इस पृथ्वीसे विदा हो गये हैं। हे सुभग! यदि तुम्हें अगले जन्ममें अनुपम सुख प्राप्त करनेकी इच्छा हो, तो इस नवकार-मन्त्रका नित्य जाप करनेसे भी कभी मत चूकना।"

इस प्रकारकी सुनहली शिक्षा सुनकर सुभगके रोंगटे खड़े हो गये। इस नवकार-मन्त्रकी प्राप्तिसे वह अपनेको धन्य मानने लगा। रङ्कको रत्न पानेसे, रोगीको वैद्य मिल जानेसे, अन्धेको आँख पाजानेसे, मुमुक्षुको गुरुकी प्राप्तिसे और भूखेको स्वादिष्ट अन्न पाकर जो आनन्द होता है, वही आनन्द सुभगको भी प्राप्त हुआ। इसके बाद उस मन्त्रका बारम्बार स्मरण करनेसे उसके अन्तःकरणकी शुद्धि हो गयी और उसके हृदयका स्वरूप उसके नामके ही समान सुभग हो गया। उसी हृदयमें उस मन्त्रको स्थापित कर, वह नित्य नियम-पूर्वक उस मन्त्रका जाप करने लगा।

धन्य, सुभग! धन्य तुम्हारा भाग्य! अब तुम्हारी आत्मा दासत्व करने योग्य नहीं रही। अब तो नवकार-मन्त्रकी अनुपम श्रद्धाके प्रभावसे तुम्हारा अन्तःकरण प्रकाशित हो गया है। अब तुम्हारे पुण्यकी कला दिन-दिन वृद्धि पाती जायेगी। अब तुम्हारी आत्माके भविष्यकी असाधारण प्रभाव-युक्त पुष्पकली शीघ्र ही खिलनेवाली है।

एक समयकी बात है, कि वह वर्षाऋतुके समयमें एक दिन भैंसोंको चरानेके लिये जङ्गलमें गया हुआ था। भैंसें नदी पार कर, उस पारके खेतोंमें पहुँच गयीं। यह देख, सेठके तिरस्कार-

के भयसे सुभग, नवकार-मन्त्रको याद करता हुआ नदीमें कूद पड़ा। मनुष्य अपने मनमें सोचता कुछ है और दैव कुछ-का-कुछ कर डालता है। मनुष्यकी धारणा उसके पुण्योंके प्रभावसे ही सफल होती है। यदि जगत् पर कर्म-राजाकी सत्ता न हो, तो धर्म्म करते धक्का कभी नहीं लगे। नदीकी धारमें पड़ कर वेचारे सुभगकी देहमें एक काँटा इस ज़ोरसे गड़ गया, कि उसकी उसी धारमें मृत्यु हो गयी।

हाय रे कर्म! तेरा अद्भुत प्रभाव है। तेरी आज्ञाके विरूद्ध चलनेको राजा या रङ्क, मूर्ख या विद्वान् कोई भी समर्थ नहीं है। जब दिव्य देवगणभी तेरे आगे हाथ जोड़ते और सुरेन्द्रभी तेरे सामने सिर झुकाते हैं, तब सुभगकेसे सामान्य मनुष्योंकी क्या गिनती है?

दूसरा परिच्छेद
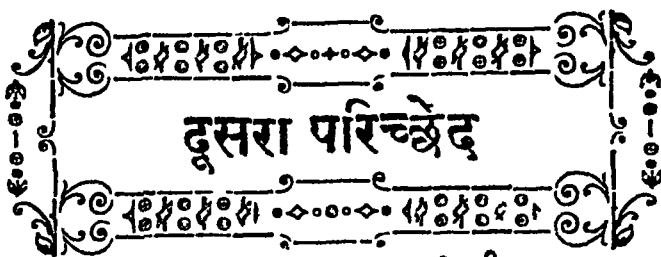
प्रथम परीक्षामें उत्तीर्ण

आज ऋषभदास सेठके घर बड़ी चहल-पहल, धूमधाम और आनन्द-मङ्गल दिखाई देरहा है। एक ओर मङ्गलके बाजे बज रहे हैं। दास-दासियाँ हर्षसे उन्मत्त होकर मन्दिरका श्रृङ्गार करनेमें लगी हैं। दूसरी ओर सेठ स्वयं याचकोंको बुला-बुला कर वस्त्र और भोजन आदिका दान कर रहे हैं। क्यों न हो? मनुष्यके लिये पुत्र-जन्मसे बढ़कर कोई दूसरा आनन्दका अवसर नहीं होता। आज वह शुभ अवसर सेठ ऋषभदासको भी प्राप्त हुआ है। इसी लिये आज उनके घर ऐसी चहल-पहल मची हुई है। आज उनके घर एक पुण्यवान् प्राणीने जन्म लिया है, जिसके प्रभापूर्ण प्रभावको देख, देवता भी चकित हो जा सकते हैं। उसके गर्भमें आते ही, उस भाग्यवान् जीवकी पुण्य-रेखाके प्रकाशसे उसकी माताके मनमें ऐसी धर्म-भावसे भरी हुई अभिलाषाएँ उत्पन्न होती रहीं, जिन्हें उसके स्वामीको (अर्थात् सेठ ऋषभदासको) बड़ी प्रसन्नताके साथ पूरा करना पड़ता था।

प्यारे पाठकगण! वह पुण्यवान् प्राणी कौन है ? जिसके गुण गानेके लिये हमारा मन पहलेसे ही अधीर हो रहा है। वह उसी सरल-स्वभाव सुभगका जीव है, जो आज सेठके घर पैदा हुआ है। जिस घरमें वह नौकरी करता था, आज वह नवकार-मन्त्रके अनुपम प्रभावके कारण उसी घरका भावी स्वामी होकर उत्पन्न हुआ है।

उस दिन नदीकी धारामें पड़कर मृत्युको प्राप्त हो, वह उसी समय अर्हद्दासीके गर्भमें अवतीर्ण हुआ। ऐसे भाग्यवान और भव्य जीवोंका जन्म-महोत्सव देवता भी यथार्थ रीतिसे नहीं मना सकते। लौकिक रीतिसे आठ दिनों तक आनन्द-उत्सवका प्रचार कर सेठने पुत्रके शुभ लक्षणोंको देख कर उसका नाम सुदर्शन रखा।

दूजके चाँदकी तरह वह बालक दिन-दिन वृद्धि प्राप्त करने लगा। उसके सुन्दर-सलोने रूपको देख कर स्त्रियाँ बड़े प्यारसे उसे अपनी गोदमें ले लेतीं और वह जो कुछ माँगता, वही लाकर उसे दे देती थीं। उस मनोहर और मुग्ध बालकको गोदमें लेकर खिलानेके ही लोभसे कितनी ही स्त्रियोंने अर्हद्दासीसे सखीपनका नाता जोड़ लिया। चतुर सेठने घरमें बहुतेरी दासियोंके रहते हुए भी उस किशोर अवस्थावाले बालकको पालने-पोसनेके लिये उनके हाथमें नहीं सौंपा और अपनी सुश्राविका पत्नीके और अपने ही पास रखकर उसे पाल-पोसनकर बड़ा करना शुरू किया जब वह कुछ-कुछ बोलने और बात समझने लगा, तब सेठ

उसे अपनी गोदमें बैठाये हुए उसे इस प्रकार उपदेश दिया करते, "पुत्र ! माँ-बापकी कही हुई बातोंको सदा मानना, उनकी आज्ञामें रहना और उनको सदा प्रसन्न रखना, भाग्यवान् मनुष्यों-का लक्षण है। सदा सत्य और प्रिय वचन बोलना। अपने धर्मके विरुद्ध कभी कोई काम नहीं करना। जो बालक देवता और गुरुकी शुद्ध भक्ति करते हैं, खूब मन लगाकर विद्या लाभ करनेकी चेष्टा करते हैं, वे केवल माँ-बापके ही प्यारे नहीं होते; बल्कि सारी दुनियाँकी निगाहमें अच्छे बन जाते हैं। सब लोग उन्हें जीसे चाहने लगते हैं। प्यारे पुत्र ! मैं तुमसे अधिक क्या कहूँ ? तुम अभी बिलकुल बच्चे हो ; पर मुझे आशा है, कि तुम अपने सुन्दर आचार-विचारसे अपनी आत्मा और अपने कुलका अवश्य उद्धार करोगे। जिसके कारण कुलका नाम और मान बढ़े, वही कुलदीपक पुत्र इस संसारमें यथार्थ पुत्र माना जाता है।"

सेठकी ये शिक्षाएँ वह बालक बड़े ध्यानसे सुनता और उन्हें अपने मन-ही-मन याद करता हुआ अपने हृदय पर अङ्कित कर लेता था।

अपने गुणवान् और विद्वान् माता-पिताके सत्सङ्गसे ही सुद-र्शन केवल ऊपरसे देखनेमें ही सुदर्शन नहीं रहा, बल्कि हृदयसे भी सुदर्शन बन गया। उसने बालकपनमें ही नीति-मार्ग, कुलाचार धैर्य, धर्मश्रद्धा, शील-पालन, माता-पिताकी सेवा, देव-गुरुकी भक्ति, कुटुम्ब-वात्सल्य, दीन-दया आदि असाधारण गुणोंकी शिक्षा पायी और उसी छोटी अवस्थामें उसने इन गुणोंको व्यव-

हारमें लाना आरम्भ कर दिया। जो पुरुष जगत्‌को धैर्यकी शिक्षा देनेके लिये जन्म ग्रहण करते हैं, वे अवस्थामें छोटे होनेपर भी, उनका अन्तःकरण सदा उच्च और अतिविशाल होता है।

संसारके प्रचलित नियमके अनुसार सुदर्शन जब युवावस्थाको प्राप्त हुआ, तब उसके पिताने उसका विवाह एक कुलीन सेठकी मनोरमा नामकी कन्याके साथ कर दिया। सुदर्शन और मनोरमाके नाम जैसे एक ही तरहके थे, वैसे ही उनकी आत्माएँ भी मिलकर एक हो गयीं। वे दोनों स्त्री-पुरुष दाम्पत्य-धर्मके जानने वाले थे। इसलिये वे सांसारिक व्यवहारमें कभी रत्ती भर भी नहीं चूकते थे और अन्य स्त्री-पुरुषोंके लिये आदर्श बन गये थे। पतिके मनके मुताबिक़ चलती और उनकी प्रेमपात्री बनी हुई मनोरमा आर्हत-धर्मकी आराधना किया करती थी। बालकपनसे ही श्रद्धाका शुभ और दिव्य संस्कार उसके मानस-क्षेत्रमें उगा हुआ था। सुदर्शनके समागमसे वह संस्कार और भी दे दीप्यमान होकर उसके श्राविका-धर्म-की पूर्णताकी सूचना दे रहा था। क्यों न हो? जहाँ ऐसे दम्पती हों, वह स्थान चाहे राजाका महल हो या पत्तोंकी बनी कुटिया— वहाँ सांसारिक सुख और धार्मिक अभ्युदय होना, कुछ आश्चर्यकी बात थोड़े ही है? मनोरमाकी मनोहारिणी मर्यादा और अपनी व्यवहारकुशलता तथा न्याय-निष्ठाके कारण सुदर्शन अपनी जातिमें ही नहीं, सारे नगर और राजदरबारमें भी दिन-दिन अधिकाधिक सम्मानित होने लगा।

एक दिन राजाके कपिल नामक पुरोहितके साथ उसकी मित्रता हो गयी। वह भी स्वभावसे शान्त और साहित्यका रसिक था, इसलिये सदा सुदर्शनके अनुकूल होकर रहने लगा। कभी-कभी उन दोनोंमें रसीली वार्त्ताओंका वह रंग-रस उड़ने लगता, कि उन्हें समयपर भोजन करनेकी भी सुध नहीं रहती। कितने ही लोग इन दोनोंका यह प्रेम-भाव देख, इन्हें राम लक्ष्मणकी जोड़ी कहा करते थे।

बारम्बार इस प्रकार अपने पतिको समयपर खानेके लिये घर आते न देखकर, एक दिन पुरोहितकी पत्नीने उससे पूछा,—"स्वामी! आजकल तुम खाने-पीने या अन्य सांसारिक कार्योंके करनेमें इतनी ढीलढाल क्यों करते हो?"

कपिलने उत्तर दिया,—"प्यारी! मेरा एक परम प्रिय मित्र है। उसका नाम सुदर्शन है। उसीके साथ प्रेम-भरी बातें करनेमें मैं सब कुछ भूल जाता हूँ। वैसा महानुभाव मित्र पाकर मैं अपनी आत्माको धन्य मानता हूँ। मेरे उस महामति मित्रमें इतने अद्भुत गुण भरे हैं, कि मैं उनके शतांशका भी वर्णन नहीं कर सकता। उसकी बातोंसे अमृतकासा रस टपकता रहता है। उसका मुखड़ा चन्द्रमाकी भाँति सदा प्रफुल्ल दिखाई देता है। उसने कितनी ही बार मुझे धैर्यका गुण और धर्म बतलाकर गुरुकी भाँति मुझे उपदेश दिया है। प्यारी! मैं तुमसे अधिक क्या कहूँ? मैंने आजतक उसकासा नररत्न दूसरा नहीं देखा।"

"प्यारे ! आज कितने दिनोंसे मैं तुम्हारे ही नामकी माला जप रही हूँ आज मुझे मनचीता अवसर हाथ आया है। इसलिये मेरी प्रार्थना स्वीकार कर तुम मेरे साथ रति-विलास करो; क्योंकि इस समय मेरे पति बाहर गये हुए हैं। ऐसा मौका फिर नहीं मिलेगा।"

(पृष्ट) ११

अपने पतिके मुँहसे सुदर्शनकी इतनी प्रशंसा सुनकर कपिलकी स्त्रीके रोंगटे खड़े हो गये। वह इसी समयसे सुदर्शनसे मिलनेके लिये व्याकुल हो गयी और सुदर्शनके दर्शनोंके साथ-ही-साथ उसके समागमके लिये भी उत्सुक हो गयी।

एक दिन ऐसा अवसर आया; कि कपिलको राजाकी आज्ञासे कहीं बाहर जाना पड़ा। यह मौक़ा पाकर उसकी स्त्री सुदर्शनके घर जा पहुँची और सुदर्शनको देखते ही व्याकुल होकर स्त्री-चरित्रका अनुकरण करती हुई कहने लगी,—"हे सुदर्शन! आज तुम्हारे मित्रकी तबियत अच्छी नहीं है; इसलिये उनके पास आकर ज़रा उन्हें ढाँढस बँधाना। वे तुम्हें देखनेके लिये तड़प रहे हैं।

उसको यह बात सुन, उसे सच समझ, सुदर्शन अपने मित्रकी बिमारीका हाल सुनते ही व्याकुल होकर उसके घर पहुँचा, नहीं तो बिना प्रयोजनके वह किसीके घर नहीं जाता था। वहाँ पहुँच कर उसने कपिलकी स्त्रीसे पूछा,—"अब बतलाओ, मेरे मित्र कहाँ हैं?

यह सुन, उसे एक दूसरे कमरेमें ले जाकर उस कामिनीने उस कमरेके किवाड़ भीतरसे बन्द करते हुए कहा,—"प्यारे! आज कितने दिनोंसे मैं तुम्हारे ही नामकी माला जप रही हूँ। आज मुझे मनचीता अवसर हाथ आया है। इसलिये मेरी प्रार्थना स्वीकार कर तुम मेरे साथ रति-विलास करो; क्योंकि इस समय मेरे पति बाहर गये हुए हैं। ऐसा मौक़ा फिर नहीं मिलेगा।"

उसकी यह नीचता—भरी बातें सुन, सुदर्शन समझ गया, कि यह स्त्री इसीलिये मुझे धोखा देकर अपने घर ले आयी है। यह सोच, उसने अपने मनमें विचार किया,—"ओह! स्त्रियाँ काम-पीड़ासे व्याकुल होकर कितनी अन्धी बन जाती हैं। सच कहा है, कि जिसे काम सताता है, वह आँखका अन्धा और कानका बहरा हो जाता है। शास्त्रोंमें भी कहा है, कि—

"दत्तस्तेन जगत्यकीर्तिपटहो गोत्रे मषीकूर्चक-
श्चारित्रस्य जलाञ्जलिर्गुणगणारामस्य दावानलः ॥
संकेतः सकलापदां शिवपुरद्वारे कपाटो दृढः।
शीलं येन निजं विलुप्तमखिलं त्रैलोक्य चिन्तामणिम्। १।

अर्थात्—"तीनों लोकमें जो चिन्तामणिरत्नके समान माना जाता है, ऐसे शीलको जिसने गँवा दिया, उसने मानो सारे संसारमें अपनी बदनामीका ढिढोरा फिरवा दिया। अपने कुलमें स्याही लगवा दी, चारित्रको जलाञ्जलि दे दी, गुण-गण-रूप आराममें (बागीचेमें) आग लगा दी, सब आपत्तियोंको न्योता देकर बुला लिया और मंगल-द्वार पर मजबूत किवाड़ बंद कर दिये।"

"शील-भङ्गका ऐसा साक्षात् बुरा परिणाम देखनेको मिलता है, तो भी लोग विषयान्ध होकर इस बुरे कामसे हाथ नहीं खींचते। ओह! एक विषय-भोगकी इच्छा पूरी करनेके लिये मनुष्यको कितने तरहके प्रपञ्च रचने पड़ते हैं! ऐसी प्रतिकूल परिस्थितिमें पड़कर अपने मनको मेरूके समान अचल बनाये

रखना ही अन्तःकरणसे शुद्ध बने हुए मनुष्यका काम है। अत-एव किसी-न-किसी तरह मुझे इस परीक्षामें उत्तीर्ण होना ही पड़ेगा। इसके लिये यदि मुझे "शठंप्रति शाठ्यं कुर्यात्" वाली नीतिका अनुकरण करना पड़े, तो भी कोई दोष या शङ्काकी बात नहीं है।"

मन-ही-मन ऐसा विचार कर, सुदर्शनने कपिलकी स्त्रीसे कहा,—"देवी! मुझे इस बातका बड़ा दुःख है, कि मैं तुम्हारी इस प्रार्थनाको पूरा करनेमें असमर्थ हूँ; क्योंकि इस यौवनाव-स्थामें भी विषय-सुखसे वञ्चित कर रखनेके लिये विधाताने मुझे नपुंसक बना दिया है। अब मैं अपने कर्मोंके सिवा और किसे दोष दूँ? देवी! तुमने एक ऐसे आदमीसे भिक्षा माँगी, जो आप ही भिक्षुक है। भला बाँझ स्त्री पुत्र कहाँसे ले आयेगी? यदि ऐसी बात न होती तो तुम्हारे समान नयी-नवेली और छबीली-रसीलीको पाकर भी कौन युवा पुरुष रति-विलास करनेमें आनाकानी करता?"

सुदर्शनकी यह बात सुन, वह निराश हो गयी, वह इतनी लज्जित हुई, कि उसने चुपचाप, बिना कुछ कहे सुने, उसे विदा कर दिया। सुदर्शन भी अपनी विजयपर मन-ही-मन प्रसन्न होता हुआ अपने घर आया। जैसे कोई विद्यार्थी परीक्षामें पास होने पर अपना अहोभाग्य समझता है, वैसे ही सुदर्शन भी इस प्रथम परीक्षामें उत्तीर्ण होकर अपनी आत्माको धन्य मानने लगा।

उस दिनसे सुदर्शनने निश्चय कर लिया, कि अब किसीके
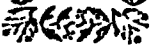
घर नहीं जाऊँगा। जैसे खरादपर चढ़कर हीरा चमकने लगता है, वैसे ही इस प्रथम प्रसङ्गमें विजयी होकर सुदर्शनके धर्मकी ध्यान-धारा अधिकाधिक उज्ज्वल होने लगी। उसने इस सार-हीन संसारमें केवल स्वार्थकी ही लीला देखी। देखकर उसे बड़ा वैराग्य सा हो गया।

धन्य सुदर्शन! धन्य तुम्हारी निश्चलता और धन्य तुम्हरा धैर्य्य! तुम्हारा शील कैसा निर्मल है। तभी तो तुम इस कठिन परीक्षामें उत्तीर्ण हुए। धर्मात्मा सुदर्शन! तुम्हारे पुण्यकी प्रबल रेखाकी प्रभा देवताओंके दिव्य तेजसे भी कहीं अधिक उज्वल है। ऐसी कठिन परीक्षामें इस संसारमें तुम्हारी तरह कोई विरला ही वीर उत्तीर्ण होता है। कविने ठीक ही कहा है, कि 'चन्दन न वने वने' अर्थात् सब जंगलोंमें चन्दन नहीं होता।
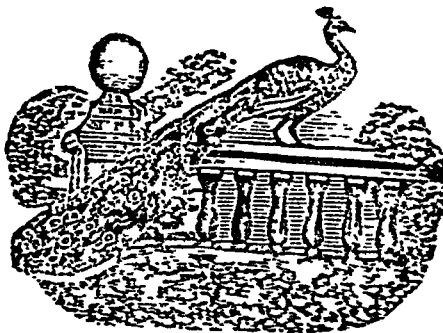
तीसरा परिच्छेद ।

कठिन प्रतिज्ञा

एक दिन राजा दधिवाहन, सुदर्शन और कपिलके साथ-साथ किसी उपवनमें क्रीड़ा करने गये। वहाँ तरह-तरहकी बातों और हँसी-दिल्लगी करते हुए वे योंही बाग़में टहल रहे थे। इसी समय पुरोहितकी स्त्री कपिला भी रानी अभयाके साथ-साथ उसी बाग़में घूमने-फिरनेके इरादेसे आ पहुँची। ये दोनों शृङ्गार-रसके सरोवरमें कण्ठ-पर्यन्त डूबी हुई थीं। वे इसी विषयकी बातें करती हुई कभी फूली-फूली लताओंकी छायामें, कभी फ़व्वारेके शीतल समीरके पास, कभी चम्पाके चौकमें, कभी माधवीके मैदानमें आनन्दके साथ घूमती-फिरती और उठती-बैठती हुई फूलोंसे चंगेरी भरती चलती थीं। इसी समय बाग़के उस पारके रास्तेसे जाती हुई सुदर्शनकी पत्नी मनोरमा, अपने छः पुत्रोंके साथ दिखलाई दी। उसकी मस्तानी चाल और मनोहर सुन्दरता देख, कपिलाने रानीसे पूछा,—"देवी! यह अपने सौभाग्यके आगे रम्भा और रतिको भी लजाने-

वाली और अपनी ललित गतिके आगे गजको भी मात करनेवाली ललना कौन है?"

कपिलाकी इस शब्द-रचनासे प्रसन्न होकर अभया रानीने कहा,—"कपिला! यह ललनाओंमें लक्ष्मीके समान और कला-कौशलमें सरस्वतीको भी लज्जित करनेवाली स्त्री, सेठ सुदर्शनकी गृहलक्ष्मी है।"

यह सुनते ही कपिला चौंक पड़ी और बड़े आश्चर्यके साथ फिर कहने लगी,—"देवी! यह सुन्दरी कमल-नयनी सचमुच सुदर्शनकी ही पत्नी हो, तो इसकी इन सन्तानोंके विषयमें मुझे बड़ा भारी सन्देह है।"

उसकी यह बात सुन, अभयाके मनमें बड़ा सन्देह हुआ और उसने उससे खुलासा कहलवाने लिये कहा,—"कपिला! जगत्के सामान्य और स्वाभाविक नियमोंमें भला सन्देह करनेका क्या काम है?"

यह सुन, कपिलाने कहा,—"रानी! एक समयकी बात याद करनेसे तो मुझे ऐसा मालूम पड़ता है, कि सुदर्शनकी नपुंसक है; फिर इस स्त्रीके इतनी सन्तानें कैसे हुईं?"

इसके बाद रानीने जब उससे बहुत खोद-विनोद करके पूछा, तब उसने सब बातें खोल कर रानीसे कह दीं। उसकी बातें सुन, रानीने हँस कर कहा,—"कपिला! उसने तुम्हें साफ़ धोखा दे दिया। वह बड़ा भारी धर्मात्मा है; इसलिये परायी नारीके लिये भले ही नपुंसक हो; पर अपनी स्त्रीके लिये कदापि नपुं-

सक नहीं हो सकता। मूर्ख कहीं की! तुम्हें उसकी सूरत-शकल और चाल-ढालसे भी यह नहीं मालूम हो सका, कि वह मर्द है या नामर्द?"

रानीकी इस दिल्लगीने थोड़ी देरके लिये उसकी बोलती बन्द कर दी—कुछ देरतक उसका मुँह नहीं खुला। अन्तमें उसने मन-ही-मन एक युक्ति सोचकर कहा,—"रानी! सुदर्शनने मुझे भले ही धोखा दे दिया हो; पर यदि तुम उसे फँसा लो और उसके साथ भोग विलास कर लो, तो मैं जानूँगी, कि तुम मुझसे अधिक बुद्धिमान् हो।"

यह सुन, रानी अभयाने कहा,—"कपिला! यह कोई ऐसा बड़ा भारी काम नहीं है, जो नहीं बन पड़े। बड़ी-बड़ी रूपवती राजकुमारियाँ भी जिन्हें मोहित नहीं कर सकतीं, उन राजाओंको भी मैं अपनी आँखोंके इशारे पर नचाया करती हूँ। जब बड़े-बड़े वनवासी तपस्वी और महर्षी भी कामिनियोंके कटाक्षसे घायल हो जाते हैं, तब इस बेचारेकी क्या हक़ीक़त है? यह तो भामिनी-की भृकुटीपर भौंरेकी तरह भ्रमण करता फिरेगा। अरी बावली एकेन्द्रिय वृक्ष भी जब कामिनियोंके कर स्पर्शसे प्रफुल्लित हो जाते हैं, तब पञ्चेन्द्रिय मनुष्योंका क्या कहना है? कहा भी है कि —

"सुभाषितेन गीतेन युवतीनाञ्च लीलया।
मनो न भिद्यते यस्य, स योगी ह्यथवा पशुः॥

अर्थात्—"सुभाषित संगीत, और ललनाओंकी लीलासे जिनका मन चञ्चल नहीं हो जाता, वह या तो योगी या पशु है।"

मेरा तो यहाँतक ख़याल है, कि योगी और पशु भी ललना-ओंके लालित्यको देखकर मुग्ध होकर उनसे लिपट जाते हैं। इस लिये कपिला! देख, मैं प्रतिज्ञा करती हूँ, कि "यदि मैं सुदर्शनके साथ रति-विलास न कर सकी, तो आगमें जल मरूँगी।"

इस प्रकार रानी अभयाने उसी समय कठिन प्रतिज्ञा करके हठ ठान ली। इसके कुछ देर बाद घूम-फिर कर वे दोनों घर चली आयीं। राजा इत्यादि भी कुछ देरतक वहाँ मौज-बहार करके अपने-अपने स्थानको चले गये। अभयाका मन सुदर्शनके साथ भोग-विलास करनेको उत्सुक रहा हो वा नहीं; पर अब तो वह कठिन प्रतिज्ञा कर चुकी, इसलिये वह अपनी बात पूरी करनेका ढंग सोचने लगी।

एक दिन रानीने अपनी धाय-माता पण्डितासे अपनी प्रतिज्ञाकी बात एकान्तमें कह सुनायी। सुनकर उसने कहा,—"बेटी! महात्माओंका धैर्य और सुर-गिरिका शिखर हिलाना एकसाँ कठिन कार्य है। साधारण श्रावक भी परायी नारीको अपनी बहन मानता है, फिर सुदर्शन जैसे धर्मात्माकी तो बातही न्यारी है। मृग-जलसे प्यास बुझानेकी इच्छा करना अथवा खर-हेका सींग ढूंढ़नेके लिये वन-वन भटकना जैसा व्यर्थ है, वैसा ही सुदर्शनके शीलका खण्डन करनेका साहस करना भी आसमानका फूल तोड़ना है। इसलिये बेटी! तुमने बिना विचारे यह कठिन प्रण ठान लिया है। इसका निर्वाह करना बड़ा ही मुश्किल है।

अपनी धाय-माताकी यह बात सुन, रानी अभयाने फिर

कहा,—"माता ! चाहे जो कुछ हो, पर मुझे तो यह प्रतिज्ञा पूरी करनी ही पड़ेगी। तुम कोई-न-कोई ऐसी तरकीब ढूँढ़ निकालो, जिससे वह एक बार मेरे घर पर आ जाये। यदि मेरी प्रतिज्ञा भङ्ग हुई, तो मुझे आगमें जल मरना पड़ेगा।"

इस प्रकार रानीको अपनी हठ पर अड़ी हुई देख, पण्डिताने अपने मनमें कुछ सोच-समझ कर कहा,—"बेटी! वह पर्वके दिन पौषध ग्रहण कर किसी शून्य गृहमें कायोत्सर्ग करके पड़ा रहता है। उसी अवसरपर उसे यहाँ लाना ठीक होगा। और किसी तरह उसे यहाँ ले आना मुश्किल है। वह कभी परायी स्त्रियोंका विश्वास नहीं करता और किसी ऐसे-वैसे कामके लिये भी किसीके घर नहीं जाता।"

यह युक्ति अभयाको भी पसन्द आयी और उसने पण्डिताकी बात मान ली। इसके बाद पहरेदारोंके मनमें विश्वास उत्पन्न करनेके लिये उसने सुदर्शनके शरीरके मापकी एक कृत्रिम मूर्त्ति तैयार की और उसे प्रतिदिन राजमहलके ज़नानख़ानेमें ले आती और फिर लौटा ले जाती थी।

सच है, ये ललनाएँ पापकी मूर्त्ति हैं। ये एक पापके लिये सौ-सौ प्रपञ्च रचती हैं। मनुष्यके मनकी मर्यादा तोड़नेवाले पापोंकी गिनती कम नहीं है। लोग यह बात भली भाँति जानते हैं, कि पापका परिणाम बुरा होता है, तो भी वे बार-बार पापकी ही ओर लुढ़क पड़ते हैं, यह बड़े भारी आश्चर्य और दुःखकी बात है।

—०—

चौथा परिच्छेद

विघ्नमें विजय

—:o:—
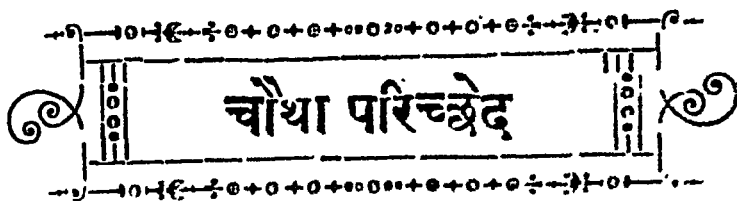
एक समयकी बात है, कि राजाने कौमुदी-पर्वके * उपलक्षमें सब नगर-निवासियोंको वनमें जाकर क्रीड़ा करनेकी आज्ञा देते हुए सारे नगरमें ढिंढोरा फिरवाया। उस दिन चातुर्मासिक पर्व होनेके कारण राजाकी आज्ञा पाकर भी सुदर्शन सेठ धर्म कृत्य करनेके लिये अपने घर ही रह गया। यह मौका पाकर पण्डिताने रानी अभयासे आकर कहा,—"बेटी! देखो, आज तुम्हारी प्रतिज्ञा पूरी होनेका अवसर आ गया है। इसलिये तुम कौमुदी-महोत्सवमें न जाकर अपने घर ही रहो।" उसकी यह बात सुन, रानी सिर-दर्दका बहाना कर, राजाको समझा-बुझाकर, घरही रह गयी।

स्त्रियों! तुम्हें कितने हथकंडे याद हैं! न मालूम, विधाताने किन-किन उपादानोंसे तुम्हारा साहस बनाया है। तुम्हारे चरित्र भला किसकी समझमें आ सकते हैं?

---

* कौमुदी-पर्व दीपमालिकाको कहते हैं।

उस दिन सेठ सुदर्शन, देव-पूजन आदि नित्य कर्मोंमें दिन विताकर, रातके समय, एक शून्य गृहमें कायोत्सर्ग-ध्यान करता हुआ पड़ा था। उसी समय पण्डिता वहाँ आयी और उसे पालकीमें बैठाकर अभयाके पास ले गयी। अपनी प्रतिज्ञा और मनचाही वात पूरी होनेका समय पास आया जानकर, अभयाके आनन्दकी सीमा न रही।

अभयाने मन-ही-मन प्रसन्न होते हुए गहने-कपड़ोंसे अपने शरीरकी शोभा सौगुनी वढ़ाकर शृङ्गार-रसकी साक्षात् मूर्त्तिके समान सेठ सुदर्शनके पास आ, उसके ऊपर अपने नुकीले नयनोंके वाण छोड़ते हुए कहा,—"भद्र! आज मेरे प्रेम-समागमकी प्राप्तिके लिये वहुत दिनोंसे की जाती हुई तुम्हारी तपस्या सफल हो गयी। अव इस अवसरका लाभ उठाते हुए तुम अपना अभीष्ट चरितार्थ कर लो। अपनी कुन्दकलीके खिलौनेके समान मधुर मुसकानसे, भ्रमर-गुञ्जित प्रफुल्ल कमलके समान नेत्रोंसे, विम्वफल और प्रवालकी लालिमाको भी लज्जित करनेवाले अधरोंके चुम्वनसे और केसर तथा कुंकुमके रङ्गवाले अपने शरीरके आलिङ्गनसे मुझे सुखी करते हुए तुम आपभी अपना मनोरथ पूरा करो।"

इस प्रकारके मन-लुभावने वचन वोल-वोलकर वह सेठसे वार-वार विषय-भोगकी याचना करने लगी; परन्तु वह याचना सेठके ध्यान-रूपी पुष्पको विकसित करनेका एक साधन ही वन गयी। उसके प्रत्येक शब्दको सुन-सुनकर सेठका आत्मिक वल क्रमशः वढ़ता चला गया। सच है, जव आत्मिक वल उन्नति

पर होता है, तब तात्विक शब्दोंकी तो बात ही क्या है, विकार-पूर्ण शृङ्गार-रसके शब्द भी उपदेश-प्रद ही बन जाते हैं। यही महात्माओंका महत्व और सन्तोंकी सज्जनता है।

सेठ सुदर्शनने क्रमशः ध्यानकी ऊँची सीढ़ियों पर चढ़ते हुए यही निश्चय किया, कि जबतक मैं इस सङ्कटसे छूट न जाऊँ, तबतक कायोत्सर्ग किये ही रह जाऊँ। इस प्रकारका निश्चय कर, वह ध्यानस्थ ही बना रहा।

जब नम्रता-भरे अनुकूल वचन सुनकर भी सेठकी ओरसे कुछ जवाब न मिला, तब रानी अभयाने क्रोधमें आकर कर्कश वचन कहने आरम्भ किये। उसने कहा,—"अरे धूर्त्त! मैं इतनी विनयके साथ तेरी प्रार्थना कर रही हूँ, तो भी तुझे दया नहीं आती? इस तरहसे तू कितनी देर तक मुझे सताता रहेगा? मैं एक महाराजाकी मानवती रानी होकर भी तेरे सामने दीन-भावसे खड़ी हूँ; तो भी तेरा कठोर हृदय नहीं पिघलता? अरे, अक्लका अन्धा कहींका! स्त्रियोंके साथ बहुत वैर-विरोध कर-नेसे वे पीछे नागिनसे भी बढ़कर भयङ्कर बन जाती हैं और क्या-क्या दुर्दशा नहीं कर डालतीं, इसकी तुझे ख़बर है, कि नहीं? बाघिनकी पीठपर प्यारसे हाथ फेरनेकी बात तो दूर रहे, तूने तो उसे सताकर और भी भयङ्कर बना दिया है। रे नीच! तू मेरे सामने भी अपनी नीचता दिखलाया चाहता है? अमृतके तालाबमें ज़हर मिलाकर तू किस लिये अपने जीवनको ख़तरेमें डालता है? यदि तुझे दुःखके दरियामें डूबना हो और यमका

इसी प्रकार कभी तो उसके गलेमें अपनी कमलसी बाँहोंसे गलबाँही डाल देती और कभी उसका विलक्षण रीतिसे आलिंगन करने लगती थी। उसकी ऐसी असभ्य चेष्टाओंसे भी सुदर्शनको किसी तरहका विकार उत्पन्न नहीं हुआ। वह एकाग्र होकर ध्यानमें मग्न बना रहा। (पृष्ठ २१)

अतिथि बनना हो अथवा यहींपर नरकका नमूना देखना हो, तो भले ही अपनी हठपर अड़ा रह। ढोंगी कहींका? अब तेरा यह ढोंग देरतक नहीं चलने पायेगा। रमणीको रुष्ट करनेका फल तुझे थोड़ी ही देरमें भोगना पड़ेगा।"

इस प्रकारके प्रचण्ड वाक्यवाणोंका प्रहार करनेके साथ-ही-साथ वह कभी तो उसके शरीरका स्पर्श करती और कभी उसका हाथ खींचकर दबा देती अथवा अपनी पीन पयोधरों तक ले आती थी। इसी प्रकार कभी तो उसके गलेमें अपनी कमलसी बाँहोंसे गलबाँही डाल देती और कभी उसका विलक्षण रीतिसे आलिंगन करने लगती थी। उसकी ऐसी असभ्य चेष्टाओंसे भी सुदर्शनको किसी तरहका विकार नहीं उत्पन्न हुआ। वह एकाग्र होकर ध्यानमें मग्न बना रहा। वह कभी तो संसारकी विचित्रताका, कभी आत्मा और कर्मके सम्बन्धका, कभी विषम विषयोंके वेगका और कभी उनके कड़वे फलोंका विचार करता हुआ आत्म-प्रभावकी प्रबल प्रभाको अधिकाधिक प्रकाशित कर रहा था।

इसी तरह अभया सारी रात विषयकी याचना, और कपट-कपट करती रही; पर सुदर्शनका मन न डिगा। क्रमशः रात बीत चली—आकाशमें तारोंकी प्रभा मन्द पड़ने लगी। सूर्यका सारथि अरुण गगन-मार्गमें आनेकी तैयारी करने लगा। इसी समय आकाशमें फीके पड़े हुए चन्द्रमाको देखकर अभयाने आईनेमें अपने कुम्हलाये हुए मुखके साथ उसका मिलान किया; तो

भी कुछ फर्क नहीं मालूम पड़ा। अभागिनी अभयाके सारे मनोरथों पर पानी पड़ गया। उसकी सारी युक्तियाँ व्यर्थ चली गयीं। वह समझ गयी, कि अब मेरी मनस्कामना किसी तरह सिद्ध नहीं होगी। अब उसमें पहलेकी सी हिम्मत और ताकत नहीं रही। जब वह एकबारगी निराश हो गयी, तब अपनेको निराश करनेवालेसे वैर भँजानेके लिये मुस्तैद हो गयी। इसी समय उसे "नारीणां रोदनं बलं" यह वाक्य याद आ गया और वह अपने ही नखोंसे अपने शरीर पर क्षत करती हुई, बालों और वस्त्रोंको अस्तव्यस्त करती हुई, ज़ोर-ज़ोरसे रोने-चिल्लाने लगी।

उसकी चिल्लाहट सुन, पहरेदार तुरत दौड़े हुए वहाँ आ पहुँचे और ध्यानमें मग्न सुदर्शन सेठको देखकर सोचने लगे,—"जैसे चन्द्रमामें विष, जलमें अग्नि और चन्दनमें दुर्गन्धका होना असम्भव है, वैसेही इस सेठके द्वारा ऐसा कुकर्म होना भी असम्भव है। यह बात किसी तरह मानने योग्य नहीं है। यह धर्मात्मा तो कभी राह चलते भी ऊपर को निगाह नहीं करता। इसकी वर्त्तमान स्थिति भी निर्दोषताका ही परिचय दे रही है। इसकी दृष्टि नासिकाके अग्रभाग पर ही स्थिर हो रही है। इससे भी यही सूचित होता है, कि इसके मनमें कुछ भी पाप नहीं है। ऐसे महात्माको बिना सोचे-समझे बाँधना-मारना ठीक नहीं है।"

ऐसा विचार कर, वे अपना कर्त्तव्य पालन करनेके लिये राजाको ख़बर देने चले। यह समाचार सुनकर राजाको भी

बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने सन्देहमें पड़कर सोचा, कि सेठ सुदर्शनके ऐसे आचरणकी तो कल्पना भी सत्य नहीं मालूम होती; पर तो भी सबके सामने इस बातका निर्णय करना आवश्यक समझकर वे आप ही वहाँ जा पहुँचे। वहाँ जाकर उन्होंने जो दृश्य देखा, उससे उनकी बुद्धि चकरा गयी। उन्होंने सत्यासत्यका निर्णय किये बिना किसी तरहका फ़ैसला करना अच्छा नहीं समझा और चुपचाप वहाँ रखे हुए एक आसनपर बैठ गये। इसी समय अभया रोती हुई उनके पास आयी और गद्गद-कण्ठसे कहने लगी,—"नाथ! आज मैं आपसे आज्ञा लेकर अन्तःपुरमें ही रह गयी थी। यह दुष्ट इस समय न जाने किस रास्तेसे मेरे पास आकर अनुचित प्रार्थना करने लगा। इसने तरह तरहके मधुर वचन कहकर मुझे लुभानेकी बड़ी चेष्टा की; पर मैं किसी तरह अपने धर्मसे विचलित नहीं हुई। तब इस दुष्टने नखोंसे मेरे शरीर पर क्षत कर दिये और मुझे इतना तङ्ग किया, कि आपसे कहते हुए भी मुझे लज्जा आती है। जब इसकी कोई चेष्टा काम न आयी, तब यह मुझ अबलापर बलात्कार करनेको तैयार हो गया। लाचार, मैंने घबराकर शोर-गुल मचाना शुरू किया। मेरी चिल्लाहट सुनकर पहरेदार दौड़े हुए यहाँ आ पहुँचे। यह देखकर इस ढोंगीने अपना भण्डा फूटनेके डरसे ध्यानावस्थित होनेका ढोंग रचा और ऐसा योगी बन कर बैठ रहा, कि मजाल क्या, जो कोई इसकी दुष्टताको ताड़ ले। परन्तु स्वामी! ऐसे मिथ्या ढोंग रचनेवालोंपर विश्वास न कर, उन्हें दण्ड देना ही राजाका धर्म है।"

रानीकी इन नोन-मिर्च लगी बातोंको सुनकर थोड़ी देरके लिये, राजाके मनमें भी सुदर्शनकी निर्दोषतापर सन्देह उत्पन्न हो गया। उन्होंने पूछा,—"क्यों सेठ! तुमने ऐसा कुकर्म क्यों किया?"

रानीकी दशापर दया करके सुदर्शनने इसके उत्तरमें कुछ भी नहीं कहा। राजाने सोचा,—"चोर और परायी नारी पर अत्याचार करनेवालोंके मुँहसे बात नहीं निकलती। यह अवश्य ही अपराधी है।" ऐसा विचारकर, राजाने सबके सामने सुदर्शनको दोषी ठहराया और मन-ही-मन अत्यन्त क्रोधित हो, रक्षकोंको यह हुक्म दिया,"कि इस सेठके अत्याचारकी बातका सारे शहरमें ढिंढोरा पीट दो और इसके बाद इसे सूलीपर चढ़ा दो।"

चन्दन! तुझे लोग काट डालते हैं, तो भी तू लोगोंको सुगन्ध देनेसे जी नहीं चुराता। ईख! तुझे लोग पेर डालते हैं, तो भी तू उन्हें मीठा रस पिलानेसे बाज नहीं आता। कुछ इन्हींका सा स्वभाव सुदर्शनने भी पाया था, इसी लिये उसने आप तो फाँसीपर चढ़ना स्वीकार कर लिया; परन्तु रानीकी पोल खोल कर उसे बदनाम करना नहीं चाहा।

पाँचवाँ परिच्छेद

अनचीती आफ़त

" सोना-सज्जन कसनको विपति-कसौटी कीन ।"

राजाकी कठोर आज्ञाको सुनकर, रक्षकगण सुदर्शनको पहले नगरके बाहर ले गये। वहाँ पहुँचकर उन्होंने पहले उसके मस्तकपर कनेरके पत्ते बाँधे, कण्ठमें नीमके पत्तोंका हार पहनाया, शरीरको लाल रँगसे रँग डाला और मुँहपर स्याही फेर दी। इस प्रकार उसके शरीरकी विडम्बना कर, उन्होंने उसे एक गधेपर बैठाया और नगरके अन्दर ला, बाजे बजाते हुए उसे नगरके चारों तरफ़ घुमाने लगे।

"इसने राजाके अन्तःपुरमें घुसकर अपराध किया है, इसी लिये इसकी ऐसी फ़ज़ीहत की गयी है।" यही बात वे मुक्त-कण्ठसे लोगोंसे कहते फिरते थे। हर गली-कूचेमें उसे इसी तरह घुमाया गया। लोग उसकी यह दुर्दशा देखकर आहें भरते हुए कह उठते थे,—"हा दैव! तुझे ऐसे धर्मवीर महात्मापर ऐसा सङ्कटका पहाड़ गिराते कुछ दया नहीं आयी? यह तेरी बड़ी भारी मूर्खता है।" पर सुदर्शनका चित्त समुद्रकी तरह शान्त

था। जिस स्थानपर वह एक प्रसिद्ध और राज-सम्मानित पुरुष माना जाता था, वहीं सबके सामने ऐसी फ़ज़ीहत उठाना और चित्तमें विकार नहीं आने देना, कुछ कम बड़प्पनकी बात नहीं है। जहाँ कहीं उसके सगे-सम्बन्धियोंका घर आ जाता था, वहाँ राजाके सिपाही उसे और भी देरतक खड़ा रखते थे। उसका यह हाल देखकर, वे लोग पहले तो बड़े ही विस्मित होते ; पर जब रक्षकोंके मुँहसे सारा ब्योरा सुनते, तब मन-ही-मन कहने लगते,—"हैं ! यह क्या ग़ज़ब हो गया ? खरे सोनेमें भी ऐसी श्यामता कहाँसे आ गयी ? सूर्यमें अन्धकार कहाँसे आया ? सुधामें विष कैसे पैदा हो गया ? चन्दनमें दुर्गन्ध कहाँसे आ गयी ? अरे यह तो एकदम दुनियाँही उलट गयी ! जिसके मुखसे निकले हुए मधुर वचनोंकी सुगन्ध अभीतक हमारे हृदयसे दूर नहीं हुई है, उस धर्मात्मा-मनुष्यकी स्थिति ऐसी कैसे हो गयी ? इसने तो यहाँ तक अपनेको बचाया था, कि कभी किसीके घर न जानेकी प्रतिज्ञा कर ली थी। फिर ऐसे कार्यमें इसकी प्रवृत्ति कैसे हुई ? जिसके शरीरके रोम-रोममें धर्मका रंग जमा हुआ था, उस धर्मात्मापर ऐसा दोष लगाना ठीक नहीं। यह बेचारा तो ऐसे-ऐसे पर्व-दिवसोंके अवसरपर रात्रिके समय सूने मकानमें कायोत्सर्ग करके रहता है। यह अवश्यही दुर्दैवका दोष है, इसका नहीं। तभी राजा इसपर रुष्ट हुए हैं। अब इसे कौन बचा सकता है ? कितना भी धन जुर्मानेके तौरपर दिया जाये, तो भी अब इसका छुटकारा नहीं हो सकता।"

क्रमशः सुदर्शन अपने घरके पास आ पहुँचा। उस समय अपने पतिकी यह अवस्था देख, मनोरमा मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिर पड़ी। उसकी दासियाँ दौड़ी हुई आयीं और शीतलोपचार कर उसे होशमें ले आयीं।

(पृष्ठ २६)

इसी तरह मन-ही-मन अनेक प्रकारकी बातें सोचते हुए सुद-र्शनके सम्बन्धी, हित, मित्र और अन्यान्य सज्जनगण बहुत खेद करने लगे। किसी किसीको तो रुलाई आ गयी। क्रमशः सुदर्शन अपने घरके पास आ पहुँचा। उस समय अपने पतिकी यह अवस्था देख, मनोरमा मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिर पड़ी। उस-की दासियाँ दौड़ी हुई आयीं और शीतलोपचार कर उसे होशमें ले आयीं। होशमें आकर वह छाती कूटती और पुक्का फाड़कर रोती हुई कहने लगी,—"हाय! मेरे पवित्र और धर्मात्मा पतिपर यह कैसी आफ़त आयी? हाय! जिनके अद्भुत गुणोंको देखकर देवता भी दंग हो जाते थे, उनपर दुर्दैवने यह कैसी विपत्ति ढा दी? जिनका अन्तःकरण आर्हत-धर्मकी प्रभासे सदा प्रकाशित रहता है, उसमें ऐसा अन्धकार कहाँसे पैदा हो गया? यह बात क्या कभी—माननेकी है? चाहे सूर्य पश्चिम-दिशामें उगने लगें और सुधाकर सुधाके बदले अङ्गार उगलने लगें; पर ऐसे पुरु-षोत्तममें ऐसे दुर्गुणोंका होना सम्भव नहीं है। मेरे ही पापका उदय समझना चाहिये, कि मेरे पतिपर ऐसा सङ्कट आया और उनके नामपर यह कलङ्क लग गया। महात्माओंने स्त्रियोंको पुरुषकी अर्द्धाङ्गिनी बतलाया है। इसका मतलब यह है, कि स्त्री पतिके सुख या दुःखमें आधे अङ्गके समान बराबर सुख-दुःख भोगे और जहाँतक बन पड़े, दुःखमें पतिकी मदद करे। अतएव प्राण-नाथका यह सङ्कट देखकर चुपचाप घरके एक कोनेमें बैठी-बैठी रोती रहूँ यह मेरे लिये उचित नहीं है। इन्हीं जीवनाधारके हाथ-

में मेरे जीवनकी डोरी है। यदि यही टूट जायेगी, तो फिर मैं जी कर क्या करूँगी ? सीता जैसी परम सतियोंने अपने स्वामीके लिये जैसे सङ्कट सहन किये हैं, वह सारी दुनियाँ जानती है। इसलिये जबतक शासन-देवता मेरे पतिका यह कलङ्क और सङ्कट नहीं दूर करते, तबतक मुझसी कुलीन स्त्रीको अनशन करना ही उचित है।"

इस प्रकार निश्चय कर, मनोरमा अपने घरके एक पवित्र भागमें कायोत्सर्ग-ध्यान करके रही और शासन-देवताका स्मरण करने लगी। सुदर्शनकी शील-महिमा और सतीके इस स्मरण-चलसे आकर्षित होकर शासन-देवीने अन्तरिक्षमें ही आकर कहा,—"बेटी! मैं तुम्हारी आध्यात्मिक शक्तिसे बहुत ही प्रसन्न हुई। तुम तनिक भी खेद न करो। जाओ, शीघ्र ही तुम्हारे पतिकी पवित्रता प्रकट होगी और तुम्हारे सुखका सूर्य उदय होगा।"

यह देव-वाणी सुन, वह बड़ी सन्तुष्ट हुई और पञ्चपरमेष्ठीका ध्यान करती हुई धर्म-कार्यमें प्रवृत्त हो गयी।

राजाके रक्षकगण, उसी तरह गली-गली सुदर्शनकी फ़ज़ीहत करते हुए, सारे नगरका फेरा कराके, उसे शूलीके स्थानपर ले आये।

प्रिय पाठकगण! यह कैसा धर्म-सङ्कट है! जाज्वल्यमान अग्निमें तपाये विना सोनेका खरापन नहीं प्रकट होता। धर्मके लिये साथ मर जानेवाला यह गृहस्थ-योगी महात्मा धन्य है!

छठा परिच्छेद

सत्यकी जय।

"तोयत्यग्निरपिस्रजत्यहिरपि व्याघ्रोऽपि सारङ्गति।
व्यालोप्यश्वति पर्वतोऽप्युपलति क्ष्वेडोपि पीयूषति।
विघ्नोप्युत्सवति प्रिय त्यरिरपि क्रीड़ा तड़ागत्यपां
नाथोऽपि स्वगृहत्यटव्यपि नृणां शीलप्रभावाद्ध्रुवम्॥"

अर्थात्—"अहा! शीलके प्रभावसे मनुष्योंकेलिये आग जलके समान हो जाती है, सर्प फूलोंकी माला वन जाता है, बाघ हरिन वन जाता है, दुष्ट और मतवाला हाथी घोड़ेकी तरह सीधा हो जाता है, पर्वत मामूलीसा पत्थर हो जाता है, विष अमृत हो जाता है, विघ्न उत्सवका रूप धारण कर लेता है, शत्रु मित्र वन जाता है, समुद्र क्रीड़ा सरोवर जैसा हो जाता है और भयंकर जंगल भी अपने घरके समान हो जाता है।"

कविने शीलकी यह जो महिमा वतलायी है, वह सोलहों आने ठीक है। शीलका प्रभाव सचमुच वड़ा ही विलक्षण हो जाता है। इस अद्भुत ज्योतिके सामने और सव गुण नक्षत्रोंके समान

फीके दीखने लगते हैं। जैसे इन्द्रके प्रभावकी प्रभासे आकर्षित होकर असंख्य देवतागण उनकी सभामें आकर एकत्र हो जाते हैं, वैसेही शीलकी अतुलनीय शक्तिसे आकर्षित होकर और सभी गुण आपसे आप मनुष्यके पास आ जाते हैं। कमल क्या भौंरों-को निमन्त्रण देने जाता है? नहीं! तोभी उसकी मीठी सुगन्धसे लुब्ध होकर वे आप से आप उसके पास आ जाते हैं। इस अनुपम और मनोहर भूषणके साथ अन्य सोने-चांदीके गहनोंकी बराबरी नहीं हो सकती, जिसके प्रभावकी प्रभामयी किरणें सब देवताओंके अन्तः प्रदेशमें पहुंच कर उन्हें आश्चर्यमें डाल देती हैं, उसकी समानता भला रमणीय रत्न और मनोहर माणिकसे कैसे हो सकती है? जो भूषणोंका भी भूषण है, शोभाकी शोभा है और प्रकाशका भी प्रकाश है, उसका वर्णन शब्दों द्वारा पूरी तरह कैसे किया जा सकता है? जहाँ अन्तर की उत्कृष्टता का चित्र उतारना है, वहाँ अत्यन्त, "अधिकाधिक और उत्कृष्टतर" आदि शब्दों के सिवा और शब्द ही कहाँसे लाये जायेंगे? तो भी जो कुछ वर्णन इधर-उधर पढ़नेमें आता है, उसीका दिग्दर्शन कराया जाता है। महाराज भर्तृहरिने भी शीलकी महिमाका वर्णन करते हुए कहा है,—

ऐश्वर्यस्य विभूषणं सुजनता शौर्यस्य वाक् संयमो,
ज्ञानस्योपशमः श्रुतस्य विनयो वित्तस्य पात्रे व्ययः।
अक्रोधस्तपसः क्षमा प्रभवितु धर्मस्य निर्व्याजता,
सर्वेषामपि सर्वकारणमिदं शीलं परं भूषणम्॥"

अर्थात्—"ऐश्वर्यका भूषण सुजनता, वीरताका भूषण वाक्य-संयम, ज्ञानका भूषण उपशम, श्रुतका भूषण विनय, चित्तका भूषण सुपात्रको दान, तपका भूषण क्रोध नहीं करना, शक्तिका भूषण क्षमा, धर्मका भूषण निष्कपट-भाव है और इन सब गुणों-का कारण-स्वरूप शील सब भूषणोंका भूषण है।"

पूर्वके महात्माओंने जिस शीलकी ऐसी असाधारण महिमा मुक्तकण्ठसे गायी है, उसकी शीतल छायामें जो विश्राम नहीं करता, वह इस जगत्में व्यर्थ ही आया। जो इस शीलकी सुगन्धसे सुगन्धित नहीं हुए, वे सुन्दर होकर भी कुरूप हैं। शीलकी चमकीली प्रभा जिसके हृदयमें नहीं फैली, वह सदा अंधेरेमें ही टटोलता फिरता है। धन्य! शील! तेरी बलिहारी है। तेरी उपासना करनेवाले मनुष्योंको कामकुम्भ या कल्पवृक्षकी कोई आवश्यकता नहीं रहती। अहा! शील कैसा अनुपम गुण है। इसकी कैसी अद्भुत महिमा है? क्या ही विचित्र प्रभा है! इसमें कैसी शीतलता है? कैसा वशीकरण मंत्रका सा प्रभाव है! बस जिसने इस सुधाकुण्डमें स्नान किया, वह परम पवित्र हो गया। हे प्रभो! हमें ऐसा बल दो, जिससे हम शील-शैलके शिखर पर पहुँचकर वहाँकी शीतलताका सानन्द अनुभव करें।

जब सुदर्शन शूलीके स्थानपर लाया गया, तब उसकी उच्च भावनाएँ और भी वृद्धि पाने लगीं। उसने सोचा,—"इस संसारमें सुख-दुःखका फेरा तो सदा सबके जीवनमें लगता ही रहता

है ; जिनके पवित्र हृदयमें शील-मन्त्रका अनुपम जाप दिन-रात होता रहता है, वेही महापुरुष धन्य हैं। सङ्कटके समय अपने शरीर या अन्य बहुमूल्य भूषणोंकी चिन्ता छोड़कर अपने अन्त-भूषणको मलिन न होने देना ही बड़प्पनकी पहचान है। महात्मा-ओंने बाह्य शोभाकी अपेक्षा आन्तरिक शोभाको ही अधिक महत्त्व दिया है। कहते हैं, कि—

"अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः।"

अर्थात्—"चाहे आजही मृत्यु हो जाय, या युगके अन्तमें हो; परन्तु धीरपुरुषगण न्यायके मार्गसे पैर पीछे नहीं हटाते।"

ऐसी-ऐसी कठिन परीक्षाओंके ही समय सद्गुणोंकी प्रभा अधिकाधिक प्रकाशित होती है। इसीलिये एक विपत्तिकी तो बात ही क्या है, अगर विपत्तियोंके पहाड़ भी टूट पड़ें, तो भी "अङ्गीकृतं सुकृतिनः परिपालयन्ति"—सज्जनगण अपनी प्रतिज्ञाका अवश्यमेव पालन करते हैं। इस सुवर्णाक्षरोंमें लिखने योग्य वाक्यका स्मरण कर, धैर्यका अवलम्बन करते हुए, सब कुछ सहन कर लेना चाहिये। रे चेतन! तूने बड़े-बड़े हज़ारों भय-ङ्कर कष्ट सहन किये हैं। नरककी भयानक वेदनाके सामने तो ऐसे-ऐसे दुःख कुछ भी नहीं हैं। अन्तमें किसी दिन मेरे सत्यकी जय तो अवश्य ही होगी और मुझे अपने धर्मका बदला ज़रूर मिलेगा। यह, दैव या कर्म-राजाका अटल न्याय है। जगत्के

रक्षकोंने चिढ़कर सुदर्शनको शूलीपर चढ़ा दिया और क्रोधावेशमें आकर ऊपरसे उसपर कोड़े भी मारने लगे। (पृष्ठ ३५)

Narsingh Press, Calcutta.

प्रपञ्च और सत्यका हाल उन्हें अच्छी तरह मालूम है। उनके सामने रत्ती भरका हेर फेर होना असम्भव है। पूर्व जन्ममें किये हुए कर्मोंका भोग पाये विना मेरा छुटकारा नहीं हो सकता। यह समय निकाचित कर्मकी गाँठ तोड़ डालनेका है। इस समय यदि मैं रोप और कल्पान्त करके नये कर्म बाँधूँगा, तो इस कर्म परम्पराके परिणाम-स्वरूप दुःख-परम्पराका शीघ्र अन्त नहीं होगा। इसलिये इस समय इस सङ्कटको खूब धीरता और सम-चित्तताके साथ सहनकर लेना ही श्रेयस्कर है।

इसी प्रकार शुभ ध्यानकी सीढ़ी पर चढ़कर सुदर्शन अनुपम आनन्दका अनुभव करने लगा। इसी समय राजाकी आज्ञाके अनु-सार उनके रक्षकोंने पहले तो वाक्यबाणोंकी बौछार कर, सुद-र्शन सेठकी बड़ी अवमानना की; पर वे समभावनाके सरोवर-में स्नान कर रहे थे, इसलिये चुपचाप रहे। दुर्जनोंका यह स्वभाव है, कि वे सज्जनोंको सताया करते हैं और सज्जनोंका यही स्वभाव है, कि वे उनके किये हुए उपद्रवोंको समभावसे सहन कर लेते हैं। "मौनं सर्वार्थ-साधनम्।" अर्थात् मौन रहने-से सब काम सिद्ध हो जाते हैं—इसी वाक्यका स्मरण कर उन्होंने मौनका त्याग नहीं किया। यह देख, रक्षकोंने चिढ़कर सुदर्शनको शूलीपर चढ़ा दिया और क्रोधावेशमें आकर ऊपरसे उसपर कोड़े भी मारने लगे।

हाय रे दुर्दैव! तेरी परीक्षामें कोई विरला ही वीर उत्तीर्ण हो सकता है। तूने सीताको धधकती हुई आगमें डालकर उनकी

सतीत्व जगत्में मुक्तकण्ठसे प्रचारित किया। हरिश्चन्द्रसे नीच डोमकी सेवा कराके तूने उनकी सचाईका विश्वमें विस्तार किया और आज सुदर्शनको भी घोर सङ्कटमें डालकर तू उनके शीलकी महिमा तीनों लोकमें प्रचारित करनेको तुला हुआ है। तेरी परीक्षामें उत्तीर्ण हो जाने पर मनुष्योंको कहीं भी अनुत्तीर्ण होनेका भय नहीं रह जाता। तू मनुष्यको लड्डू दिखलाकर लकड़ीसे मारता है; पर जो धीरजके साथ तेरी मार सहता हुआ तेरे ऊपर विश्वास करता है, वही भविष्यमें मीठे फल चाख सकता है। तेरा प्रसाद मिलना, बड़े ही सौभाग्यकी बात है। कायर और कपटी मनुष्य तेरी प्रसन्नता लाभ करनेके लिये कितना सिर पीटते हैं; पर वे तेरी परीक्षामें पड़कर पागल हो, चिल्लाते रह जाते हैं। इतना ही नहीं; बल्कि कर्मकी गति विचित्र है, अपने भाग्यमें यह लिखा ही नहीं है, अपनेसे यह काम भला कैसे हो सकता है? इत्यादि बातें कहते हुए अपने मनका समाधान किया करते हैं। कहा भी है, कि—

> प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः,
> प्रारभ्य विघ्नविहता विरमन्ति मध्याः।
> विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः,
> प्रारब्धमुत्तमजना न परित्यजन्ति ॥१॥"

अर्थात्—"कितने ही अति कायर पुरुष विघ्नके भयसे *किसी कार्यको प्रारम्भ ही नहीं करते; कितने ही सामान्य मनुष्य कार्यारम्भ तो कर देते हैं; पर विघ्न पड़ जानेपर उसे छोड़*

बैठते हैं; परन्तु उत्तम पुरुष लाख विघ्नोंके आ जानेपर भी अपने प्रारम्भ किये हुए कार्यसे कभी पीछे पैर नहीं हटाते ॥१॥"

क्योंकि—

"हेम्नः संलक्ष्यते ह्यग्नौ विशुद्धः श्यामिकापि वा ॥"

अर्थात्—"सुवर्णकी शुद्धता या श्यामताकी परीक्षा अग्निमें ही तपाये जानेपर होती है। इसी तरह सद्‌गुणकी परीक्षा संकटमें ही हो सकती है।

इस तरहकी आफ़त या कसौटी मनुष्यको ऊँची स्थितिमें ले आनेकी सीढ़ी है। दैव! तेरा प्रसाद या प्रकोप मिलना, मनुष्यके हाथमें ही है। प्रिय बन्धु! यदि तुम्हें इसका प्रसाद प्राप्त करना हो, तो सङ्कटमें स्थिर रहो और इसका प्रकोप प्राप्त करना हो, तो कायरताकी काजलवाली कोठड़ीमें जाकर पड़ रहो। आज सुदर्शन सेठने जिस प्रकार उसका प्रसाद लाभ किया है, ऐसा प्रसाद किसी विरले ही भाग्यवानको मिलता है।

शस्त्र और लाठियोंकी मारके साथ-साथ सुदर्शनके शूलीपर चढ़ाये जानेपर एक और अद्भुत बात हुई। वह शूली राजसिंहासन बन गयी। सुदर्शनके अतुलनीय शीलके प्रभावसे किसी दिव्य देवताकी दयासे सुदर्शन उसी क्षण सिंहासनपर विराजमान हो रहा और शस्त्रोंका प्रहार उसके लिये अलङ्कार-स्वरूप हो गया। सिर पर प्रहार होनेसे उसके सिरपर मुकुट शोभायमान दीखने लगा। बाहुओंपर मार पड़ते ही बाजूबन्द बंध गये, कण्ठमें फूलों-

की सोनेके तारमें पिरोयी हुई माला पड़ गयी, कानोंमें कुण्डल झलकने लगे और पैरोंमें पद-भूषण शोभा पाने लगे। अहा, यह कैसा चमत्कार! कैसी महिमा! कैसी अपूर्व शक्ति है! शील! तेरे प्रभावके सामने सारे देवता सिर झुकाते हैं। यही नहीं, देवेन्द्र भी तेरे आगे दास बने रहते हैं। सच पूछिये, तो इस दिव्य और अनोखी ज्योतिके सामने और सब ज्योतियाँ तारा-ओंकी भाँति मन्द-ज्योतिवाली हो जाती हैं।

प्यारे पाठको! इस अद्भुत गुणका यथार्थ वर्णन करने योग्य शब्द भला किस शब्दकोषमें ढूँढ़े मिलेंगे? प्यारे मित्रो! पहलेके लोग भी इसका यथार्थ रीतिसे वर्णन नहीं कर सके थे। बस, बहुत हुआ तो किसी विद्वान्ने दो-चार या दस-बीस ग्रन्थ लिख डाले; पर इससे क्या होता है। यह भी महज़ फूलोंकी पंख-ड़ियाँ हैं। धन्य है, शील! इस अनुपम गुणकी अद्भुत प्रभाको हज़ार बार वन्दना और प्रणाम है!
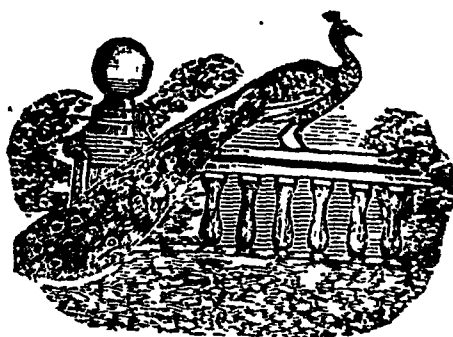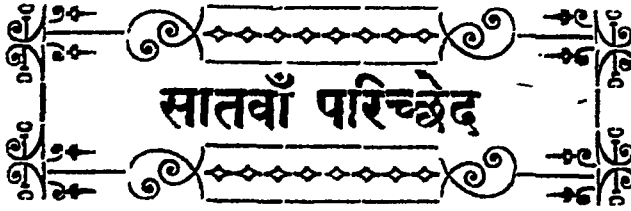
सातवाँ परिच्छेद

राज-सम्मान

"हरति कुल-कलंकं लुम्पते पाप-पङ्कं ,
सुकृतमुपचिनोति श्लाघ्यतामातनोति ।
नमयति सुरवर्गं हन्ति दुर्गोपसर्गं ।
रचयति शुचिशीलं स्वर्गमोक्षौ सलीलम् ॥१॥"

अर्थात्—"निर्मल शील कुलका कलङ्क दूर करता, पाप-रूपी पङ्कको धो डालता, पुण्यका सञ्चय करता, श्लाघ्यताका विस्तार करता, देवताओंको झुका देता, बड़े-बड़े उपद्रवों और सङ्कटोंका नाश करता और बड़ी आसानीसे स्वर्ग तथा मोक्षकी प्राप्ति करा देता है ॥१॥"

अहा, शीलकी कैसी मनोहर महिमा है! जहाँ कल्पवृक्षही आँगनमें मौजूद है। वहाँ फिर किस बातकी कमी है? जहाँ सुधा-कलश ही रखा है, वहाँ तृषा कैसी? जहाँ जगमग दीप-ज्योति जगमगा रही है, वहाँ फिर अन्धकारका क्या काम है? महात्मा सुदर्शन! तुम देवता हो या मनुष्य? चाहे जो कोई होओ; पर तुम सारे संसारके लिये पूजनीय हो गये। तुम्हारी

कीर्त्तिकी नाद्-ध्वनि मनुष्य-लोकसे चलकर देवलोक तक जा पहुँची। तुम्हारे शीलकी सुगन्ध, नाकसे नहीं, बल्कि कानों और नेत्रोंके सहारे अन्तःकरणके गम्भीर प्रदेशमें प्रवेश कर, देवों और देवेन्द्रको भी आश्चर्यमें, डाल रही है। तुम्हारी चित्त-शुद्धिकी चाँदनी सबको समान भावसे शीतलता प्रदान कर रही है। तुम्हारी धर्म-दृढ़ताकी पताका फहराती हुई ऐसी मालूम होती है, मानो भव्य जीवोंको, जो मोक्षके अभिलाषी हैं, अपने पास शिक्षा प्रदान करनेके लिये बुला रही हो। ऐसी विपत्तिमें भी विषाद्-रहित और प्रसन्न रहनेवाले तुम्हारे मुखड़ेकी बराबरी करनेवाली कोई वस्तु संसारमें नहीं दिखायी देती। तुम्हारे नेत्रोंकी एकाग्रता योगियोंके लिये भी :अनुकरण करने योग्य है। तुम्हारी सहनशीलता तो वसुन्धरासे भी बढ़ी हुई है। तुम्हारा मौन बड़े-बड़े मुनियोंके लिये भी माननीय है। महात्मा सुदर्शनके विषयमें ऐसे ही पवित्र विचार सज्जनोंके मनमें उत्पन्न होने लगे और यही सर्वथा उचित भी था।

राजा दधिवाहनने जब यह अनहोनी बात सुनी, तब एक दम भौंचकसे हो रहे। उनके मनमें एक ही साथ आश्चर्य और भय-के अङ्कुर प्रकट हुए। क्षण भरके लिये तो वे विचार-मूढ़ हो रहे। उन्हें अपने अनुचित कोप और प्रचण्ड दण्डके लिये बड़ा पश्चा-त्ताप हुआ। अपनी मूर्खता उनके कलेजेमें तीरकी तरह चुभने लगी। वे सोचने लगे,—"ओह! मैंने विना विचारे यह क्या कर डाला? मेरे बारेमें प्रजा अब क्या सोचेगी? सज्जनोंके

सुदर्शन सेठ

"महानुभाव! मैं पापी प्राणी आपके सामने मुँह दिखाने योग्य भी नहीं हूँ। आप जैसे महात्माका सम्मान करनेके बदले, मैंने वनिताके वशमें आकर आपको भयानक संकटमें डाला। इस बातको मैं जब-जब सोचता हूँ, तब-तब मेरा हृदय जलने लगता है।

Narsingh Press, Calcutta

(पृष्ठ ४२)

सामने मैं अपना कौनसा मुंह दिखलाऊंगा ? अब कौन मेरा विश्वास करेगा ? सज्जनोंको सतानेवाले पर अब कौन अनुग्रह करेगा ? किन्तु सज्जनगण अपनेको दुःख देनेवालों पर भी दया करते हैं, इसलिये अब तो मेरा यही कर्तव्य है; कि सेठ सुदर्शनसे अपने अपराधकी क्षमा-प्रार्थना कर, कृतार्थ होऊँ।"

ऐसा विचार कर, राजा तुरत ही हाथीपर सवार हो, शूलीके स्थानमें सेठ सुदर्शनके पास आ पहुँचे। वहाँ पहुँचकर अपनी आँखों वह अद्भुत चरित्र देख, चकित हो गये। थोड़ी देर तक तो वह ऐसे बेसुध रहे, कि उन्हें यह भी नहीं मालूम पड़ा, कि मैं क्या करूँ। अन्तमें धैर्य धारण कर स्वस्थ-मन हो, गद्गद-गिरासे, सुदर्शनसे कहने लगे,—"महानुभाव! मैं पापी प्राणी आपके सामने मुँह दिखाने योग्य भी नहीं हूँ। आप जैसे महात्माका सम्मान करनेके बदले, मैंने वनिताके वशमें आकर आपको भयानक सङ्कटमें डाला। इस बातको मैं जब-जब सोचता हूँ, तब-तब मेरा हृदय जलने लगता है। आपने तो सब कुछ समभावसे सहन कर लिया; पर मेरी नीचता और क्रूरता भी संसारमें प्रकट हो गयी। हे सज्जन-शिरोमणि! आप न केवल अपने कुलके भूषण हैं; बल्कि मेरे राज्यके अनुपम अलङ्कार हैं। आपके जैसे दृढ़-प्रतिज्ञ पुरुष जिस राज्यमें रहते हैं, वह राज्य और उसका राजा भी धन्य है। वहाँकी प्रजा और वह प्रदेश भी धन्य है, जहाँ ऐसे लोग निवास करते हों; क्योंकि 'शैले शैले न माणिक्यं मौक्तिकं न गजे गजे।' हर एक पर्वतमें माणिक नहीं पैदा

होता और हर हाथीमें मोती नहीं होते। आप जैसे उत्तम पुरुष किसी-किसी राज्यमें ही रहते हैं। ऐसी विकट स्थिति और भयङ्कर विपत्तिमें पड़कर भी आपका तनिक भी न डिगना, न केवल मनुष्योंको, बलिक देवताओंको भी आश्चर्यमें डाल देता है। अनेक अनुकूल और प्रतिकूल, दोनों प्रकारके असाधारण परिषहों-को सहन करनेमें आप धुरन्धर हैं। आपकी अचल भावनाका प्रकाश समस्त संसारके आबाल-वृद्ध सभी मनुष्योंके हृदयमें व्याप्त हो रहा है। हे दयालो! आप मेरा अपराध क्षमा कर दें। मैं बारम्बार आपके चरणोंमें प्रणाम कर यही विनय करता हूँ, कि मुझे भयङ्कर पापसे बचानेके लिये प्रसन्न-वदनसे दंत-पंक्तिके प्रका-शके साथ-साथ अमृत समान वाणीके मधुर प्रवाहसे मेरे जलते हुए हृदयको शीतल करते हुए उसमें नये-नये पल्लव उगाइये।

राजाके इन विनय और पछतावेसे भरे हुए वचनोंको सुनकर सेठ सुदर्शनका हृदय दयासे भर गया। उनकी योग्यताको देखते हुए उसके हृदयमें और भी प्रसन्नता हुई। राजाकी कुछ हित-वचन सुननेकी जिज्ञासा देखकर उसे बड़ा ही आनन्द हुआ। उस समय नगर-निवासियोंकी भारी भीड़के मारे उस जगह बड़ी रेल-मपेल मची हुई थी। एक ही दिव्य पुरुष पर हज़ारोंकी आँखें अँट-की हुई थीं। सुदर्शन सेठका अद्भुत और अपूर्व भाव देखकर सब किसीके अन्तःकरण प्रकाशित हो रहे थे। सब लोग अपनी सुध भूले हुए थे। किसीको यह ध्यान न रहा, कि वह कैसा मनुष्य है और किस स्थितिका है। अपनी मान-मर्यादाका ध्यान

भूले हुए असंख्य धनी-मानी सज्जन वहाँ अपने बाल-बच्चोंको साथ लिये हुए खड़े थे। 'यथा राजा तथा प्रजा' यह कहावत उस समय बहुत कुछ चरितार्थ हो रही थी।

वाह रे सुदर्शन! घड़ी भर पहले भी तुम ऐसे ही थे, तुम्हारे विचार भी ठीक ऐसे ही थे, दृढ़ता भी ऐसी ही थी, मुँह पर प्रसन्नता भी ठीक इसी तरह झलक रही थी, शरीरके अङ्ग-प्रत्यङ्ग भी ऐसे ही थे ; यही नहीं, तुम्हारी आत्मा भी यही थी; पर यह सब होते हुए भी तुम क्षुद्र मनुष्योंके असभ्य वाक्-प्रहार, यष्टि-प्रहार और बन्धनकी पीड़ा सहन कर रहे थे। किन्तु घड़ी भर बादही तुम्हारी दशामें कैसा परिवर्त्तन हो गया? तुममें ऐसा कौन सा नया बल आ गया, जिससे तुमने बिना रस्सीके ही राजा-प्रजा सबका मन अपनी ओर खींच लिया? जिस राजाने अपनी क्रूरता प्रकट करते हुए तुम्हारे ऊपर भयङ्कर दण्डाज्ञा प्रचारितकी थी, वही इस समय तुम्हारे पैरों पर झुका हुआ तुमसे क्षमा-प्रार्थना कर रहा है। यह कितने बड़े आश्चर्यकी बात है? अहा, किसीने सच ही कहा है, कि 'जहाँ चमत्कार, वहाँ नमस्कार' आज यह कहावत सवा सोलह आने सच हो रही है। आज तुम्हारे ऊपर दैव प्रसन्न हैं, इसीलिये राजा और प्रजा, बाल और वृद्ध, सभी लोग तुम्हारे प्रसन्न मुखारविन्दकी मधुर सुगन्ध लेनेके लिये उत्सुक हो रहे हैं।

लोगोंकी उत्सुकता देख, सुदर्शनने सब लोगोंके सामने ही राजासे कहा,—"हे राजन्! यद्यपि सभी प्राणी अपने किये हुए

कर्मोंका ही फल भोगते हैं, तथापि अन्य प्राणी उसके निमित्त-कारण बनकर अपने अन्तःकरणकी न्यूनाधिक क्रूरताके कारण थोड़ा बहुत पाप-कर्म उपार्जन कर लेते हैं। तो भी पीछे पश्चात्ताप करते हुए अपनी पूर्व-कृत अधम-वृत्तिकी निन्दा करना और सच्चे दिलसे उसके लिये क्षमा माँगना, मैले वस्त्रको साबुन लगा कर शुद्ध जलसे धोनेके समान है। कहनेका मतलब यह है, कि शुद्ध मनसे पश्चात्ताप करनेसे पाप एकदम धुल जाता है। जो इस प्रकार अपनी अधम-वृत्ति-रूपिणी लताओंका थोड़े ही समयमें उच्छेद नहीं कर डालता, वह भविष्यमें उस वृत्तिसे घिर कर अपनी आत्माको भी बाँध लेता है और परवश हो, दुःख-परम्पराकी नदीमें डुबकियाँ खाया करता है। जब कस्तूरी जैसी एक काली-कलूटी वस्तु भी अपनी मधुर और असाधारण सुगन्धके द्वारा जन-मान्य और राज-मान्य हो जाती है, तब यदि मनुष्यका सा ज्ञानी और महत्तम प्राणी अपने शीलकी सुगन्धसे सर्वमान्य हो जाये, तो इसमें आश्चर्यकी क्या बात है? विजय सेठ और विजया रानी जैसे शील-धुरन्धरोंका शशरूपी जीवन आजतक इस वसुधा पर विख्यात है और सूर्यकी तरह चमक रहा है। जो पुण्यवान् प्राणी होते हैं, उन्हें ही इस उत्तम गुणकी प्राप्ति होती है। लाख सङ्कट आने पर भी वे अपने सद्‌गुणकी रक्षा करते हैं और पर्वतकी तरह अचल बने रहते हैं। यही मनुष्यका मनुष्यत्व और उसके जीवनकी जगमग-ज्योति है। मनुष्यकी उच्चता और नीचता उसके गुणोंसे ही झलकती है। इसलिये हे राजन्! आप

पश्चात्ताप और हृदयकी मृदुताके द्वारा अपनी पूर्व कलुषताको दूर कर, अपनी आत्माको निर्मल बना सकते हैं। यदि कोई अज्ञानतासे अपनेको दुःख दे, सङ्कटमें डाले, तो उस बातको मनमें बैठाये हुए उसको क्रोध और ईर्ष्याके जलसे बराबर सींचते रहना तथा दिन-दिन उसकी वृद्धि करना, अधमता और अनन्तकाल तक भव-भ्रमण करानेवाला है। आपके प्रति मेरे मनमें तनिक भी दुर्भाव नहीं है। यही नहीं, आपकी नम्रता और पश्चात्तापको देखकर मेरा हृदय बड़ा ही सुखी हो रहा है। आप एक प्रजा-पालक नरेश होकर मेरे जैसे एक क्षुद्र-प्रजा-गणके साथ ऐसी नम्रता तथा मृदुतासे बातें कर रहे हैं, यह आपकी सद्गुणरागिता और स्वल्प-संसारकी सूचना है। आपकी बढ़ती हुई शुभ मनोभावना अनेक जनोंको शुभ कार्यमें असाधारण सहायता प्रदान करेगी। हे राजन्! आप मेरी ओरसे अपने मनमें तनिक भी संशय न रखें। मेरी अन्तिम इच्छा यही है, कि आपकी धर्मभावना-प्रजाके धर्म-कार्योंमें सदा सहायता देनेके लिये तत्पर रहे। मेरी एक मात्र वाञ्छा यही है, कि आप सदा विजयी हों और कर्त्तव्य-परायण बने हुए प्रजासे नित्य अभ्युदयका आशीर्वाद लेते रहें।"

इस प्रकार धार्मिक भावनाके रससे भरे और मनुष्यत्वका भाव भरनेवाले सेठ सुदर्शनके वचनोंको सुनकर राजा और प्रजा सबके मनमें आनन्द-ही-आनन्द छा गया। सेठके ऊँचे विचारोंने अनेक मनुष्योंके मनमें अद्भुत प्रभाव उत्पन्न कर दिया और उच्चत्व प्रदर्शक भावना-रूपी हिमालयके शिखरसे झरनेवाले झरनेकी तरह

उसके मुँहसे निकलनेवाली वाणी-रूपिणी सुर-सरितामें स्नानकर शुद्ध बने हुए श्रावक और अन्यान्य मनुष्य आनन्दमें मग्न हो रहे।

इसके बाद राजा, अत्यन्त हर्षित हो, बड़ी धूमधामके साथ सेठको नगरमें ले आये और उसे अपने दरबारमें ला, सब लोगोंके सामने ही उसे फूल-माला आदिसे सम्मानितकर, उसे एकान्तमें ले जाकर उससे सारा माजरा कह सुनानेका अनुरोध किया। सेठने सब कुछ सच-सच कह दिया। सारा हाल सुनते ही मारे क्रोधके राजाके सारे शरीरमें आगसी लग गयी और वे रानी अभया पर जी-जानसे नाराज़ हो उठे। उसी समय राजाका रुख देखकर सेठ सुदर्शनने शान्ति-भरे वचनोंसे उनका क्रोध दूर कर दिया और रानी अभयाको अभयदान दिलवाया। राजाने सेठकी बात मान ली और रानीको जीवदान दे दिया।

जब रानी अभयाने यह मामला सुना, तब उसने आपही अपने गलेमें फाँसी लगाकर अपनी जान दे दी और पण्डिता नामकी वह कुटनी बुढ़िया वहाँसे जान लेकर पाटलिपुत्र नामक नगरमें भाग आयी और देवदत्ता नामक एक वेश्याके घरमें रहने लगी। सच है, नीच कर्म करनेवालोंको बेमौत मरना और लाख-लाख सङ्कटोंमें पड़ना ही होता है।

अपने पतिदेवके विजयका समाचार सुनकर मनोरमाको बड़ा ही आनन्द हुआ। वह कायोत्सर्ग और धर्मध्यानसे मुक्त हो, गृहकार्यमें प्रवृत्त हो गयी और अपने स्वामीके आनेकी राह देखने लगी।

इधर राजाने सेठ सुदर्शनका विविध भाँतिसे आदर-सत्कार

कर, बड़ी धूमधाम और बाजे-गाजेके साथ आदर-पूर्वक उसे हाथी पर सवार कराके घरकी ओर रवाना किया। अपने विजयी पतिको घर आते देख, मनोरमा परमानन्दित हो, उनके चरणोंमें आ गिरी।

बस, इस समयके आनन्दका यथार्थ चित्र शब्दों द्वारा अङ्कित करना असम्भव ही समझकर हम इसके अनुभवका भार सुख-भोगी पाठकों पर छोड़ देते हैं।

परिसहमें केवलज्ञान

अहा! पुत्र, पौत्र और स्त्री आदिके मोह-पाशमें पड़े हुए प्राणी, अपनी आयुके अन्त तक आँखें खोल कर पूर्वापर विचार करते हुए सावधान नहीं होते। ललना और लक्ष्मीके मोहमें पड़ कर मूढ़ बने हुए वे लोग इनके दास बन जाते और इन्हींके इशारेपर नाचा करते हैं। उन्हें तरह-तरहके सङ्कट और अपमान सहन करने पड़ते हैं, तथापि उनका नशा नहीं उतरता और वे आगामी कालका कुछ भी विचार नहीं करते। यह बड़े ही खेदकी बात है। संसारकी आशक्ति कम हुए बिना वैराग्यकी वासना कदापि प्रकट नहीं हो सकती, एवं बिना वैराग्यके भव-भ्रमणका अन्त नहीं हो सकता, इसी तरह चौरासी रास्तेवाले नगरमें घूमनेवाले जन्मान्धकी भाँति वह जीव अनेक जन्म और अनन्त-कालतक संसारमें जन्मता-मरता है। यह जानकर भी आदमीका नशा नहीं दूर होता। आज-कल करते करते जीवन जलके प्रवाहकी भाँति बहता चला जाता है। आँखोंके सामने ही प्रतिदिन अपने सम्बन्धी, मित्र और प्रिय जन दुनियाँसे विदा होते चले

जाते हैं—सदाके लिये अपना साथ छोड़ कर स्मशान-भूमिमें सो जाते हैं, तो भी मनुष्यको अपनी स्थितिका ज्ञान नहीं होता। महात्मागण कहाँतक कहा करें? धर्म-शास्त्र क्या-क्या नहीं कहते? बेचारे उपदेशक कहाँ तक गला फाड़-फाड़ कर चिल्लाया करें? वे तो बहुत कुछ कहते-सुनते हैं; पर उनका कहा सुनकर उसे व्यवहारमें लाना तो श्रोताका ही काम है। जब तक बात गलेके नीचे उतर कर व्यवहारमें नहीं आती, तबतक भव-भ्रमणको भस्म करनेका साहस क्योंकर उत्पन्न हो सकता है? इसलिये, मैं तो अब इस अनित्य संसारको छोड़ कर चारित्र-धर्मका आश्रय ग्रहण करना ही उचित समझता हूँ।

अपने मन-ही-मन ऊपर लिखी बातोंका विचार कर, सेठ सुदर्शनने अपनी स्त्री मनोरमाको अपने पास बुलाकर कहा,—"प्यारी! इस संसारके सुख-दुःखको भोगते हुए मेरा मन इससे बिल्कुल ही उचट गया है। इसलिये मेरा विचार चारित्रधर्मका अवलम्बन करनेका है। सारा जीवन संसारके झंझटोंमें ही बिता देना, बुद्धिमानोंका कर्त्तव्य नहीं है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन चारों पदार्थोंको एक ही समान सेवन करना चाहिये। इनमें प्रथम और चतुर्थ को पुरुषार्थकी आराधना किये बिना ही समस्त जीवनकी मोहज्वालामें आहुति दे देना, बड़ी भारी मूर्खता है। तुम बड़ी बुद्धिमती और सद्गुणवती हो। साथही बड़ी ज्ञानी और धर्मात्मा भी हो। व्यवहारमें तुम बड़ी विचक्षण और कुशल हो। इसलिये किसी कार्यमें प्रवृत्त होनेके

पहले तुमसी अर्द्धाङ्गिनी और गृहस्वामिनीसे सलाह कर लेना प्रत्येक बुद्धिमान् मनुष्यका कर्त्तव्य है। अतएव प्रिये! तुम्हारा यह कर्त्तव्य है, कि तुम मेरे इस विचारमें रोक-टोक न करके मुझे इस विषयमें सम्मति और उत्साह देकर उत्तेजित करो। हम लोगोंने दम्पती-धर्म की सड़क पर संसार-व्यवहारकी गाड़ी बहुत दिनों तक चलायी, अब मेरी इच्छा है, कि इस जीवनकी गाड़ीको चारित्र-धर्मकी सड़क पर ले चलूँ। जैसे सहस्रों नदियों-का जल पान करके भी समुद्रको सन्तोष नहीं होता और हज़ारों मन लकड़ियाँ छोड़ देने पर भी अग्निकी भूख नहीं मिटती, वैसे ही मोहके वशमें पड़ा हुआ प्राणी कभी विषयोंसे तृप्त नहीं होता। जीवन भर विषयोंमें ही लिपटे रहनेके कारण उसे आत्मसाधन करनेका अवसर ही नहीं मिलता। इसलिये अवसरके अनुसार काम बना लेना, बड़ी भारी बुद्धिमानीकी निशानी है।"

अपने स्वामीके मुखसे ऐसी बातें सुनकर मनोरमा क्षणभर-के लिये कुछ सोच-विचारमें पड़ गयी; परन्तु वह धर्मात्मा थी, इसलिये तुरंत ही उसके हृदयमें विवेक-दीपककी ज्योति जग-मगा उठी और उसने स्वामीको रोकनेके स्थानमें उत्साहित करनेका ही निश्चय कर लिया। अपने लक्ष्य-स्थानको जाते हुए मनुष्यकी राहमें रोड़े अटकाना, बड़ा भारी पाप है। यह बात उसे मालूम थी। इसीसे वह अपने स्वामीकी चारित्र-भावनाकी बात सुनकर हृदयके उल्लाससे भर गयी और प्रसन्न-वदनके साथ कहने लगी,—"स्वामी! आपके पवित्र विचारोंको

सुनकर मेरा एक-एक रोआँ खिल उठा है। आपकी उत्कृष्ट धर्म-भावनाकी बात सुनकर मेरे आनन्दकी सीमा न रही। जैसे दरिद्रको रत्नकी प्राप्ति होना दुर्लभ है, वैसे ही मनुष्यके लिये चारित्र-रत्न भी दुर्लभ पदार्थ है। बड़े पुण्यवान् प्राणियों-की ही इस ओर प्रवृत्ति होती है और इसका अनुमोदन भी भाग्यवान् प्राणी ही कर सकते हैं। आपको रत्न-त्रयीके आच-रणमें अनुमति देना और आपकी बातका अनुमोदन करना, मेरे लिये बड़े भाग्यकी बात है। आपके विचारोंकी उदारता-के सामने मुझ अल्प-बुद्धि स्त्रीकी क्या हक़ीकत है? तो भी जब आप इतने प्रेमसे मेरी सम्मति माँग रहे हैं, तब इससे न केवल आपका बड़प्पन, बल्कि मेरा अहोभाग्य भी प्रकट होता है। ऐसे अनुपम कार्यमें विघ्न डालना और आपकी राहमें रोड़े अट-काना, मोहान्धताका लक्षण है और नरकमें घसीट ले जाने वाला है। पति और पत्नीका एक दूसरेके प्रति जो कर्त्तव्य है, उसे भली भाँति जानकर भी जो दम्पती परस्पर अनुकूल सहा-यता करते हुए धर्म और अर्थका साधन नहीं करते, वे किसी प्रकार संसार-सुख या आत्म-सुखके अधिकारी नहीं हो सकते। नाथ! आपके घरमें किसी चीज़की कमी नहीं है। पुण्योंके प्रतापसे अपने घरमें लक्ष्मीकी लीला-लहरी वर्तमान है, सन्तानोंका भी सुख मिला हुआ है। इसके सिवा हम दोनों-का ही मन विषयोंसे विरक्त है और हम संसारके सर्वसाधारण मनुष्योंकी भाँति स्वार्थमें वैसे लीन भी नहीं रहते। इसलिये

आपकी ऐसी उत्तम मनोभावनामें रोक-टोक डालना मैं उचित नहीं समझती। आपके पवित्र परिचयसे मुझे जो अलभ्य लाभ हुए हैं, जैसे उत्तम विचार मिले हैं और जो हितोपदेश प्राप्त हुआ है, उससे मैं भलीभाँति जानती हूँ, कि 'श्रेयांसि बहुविघ्नानि' अर्थात् अच्छे कामोंमें बहुतसे विघ्न आते हैं। इस लोकोक्तिका शतांश भी मैं स्वयं चरितार्थ करना नहीं चाहती। पतिके श्रेयमें—भलाईमें—आड़े आकर जो ललना उन्हें लालचमें डालती और अटकाती है, वह उनकी अर्द्धाङ्गिनी नहीं, बल्कि अर्द्धादिनी (अर्थात् आधे भागका भक्षण करने वाली) है। वह ललना नहीं, बल्कि स्खलना (गिराने वाली, पतित करने वाली) है। आप अपने निश्चित किये हुए शुभ-मार्गमें प्रवृत्त होकर विजयी हों, यही मेरी आन्तरिक कामना है। आप तो पहलेसे ही धर्म-दृढ़-तामें प्रसिद्ध हो रहे हैं। अबके चारित्र ग्रहण कर आप उसको सुख-पूर्वक निभा सकेंगे। हे प्राणनाथ! उत्तरोत्तर आत्म-महत्व प्राप्त कर आप अन्तमें शिव-ललनाकी लालित्य-लीलामें लीन हो जायें, यही मेरी भव्य भावना है।"

इस प्रकार अपनी प्यारी पत्नीकी सम्मति और अनुमोदन प्राप्त कर, सेठ सुदर्शनको दूना उत्साह हो आया। उसकी आन्तरिक भव्य भावना विशेष विलसित—विकसित हो गयी। उसने अपनी गृहस्थीका भार अपने पुत्रको सौंप, उसे भली-भाँति हित-भरी शिक्षाएँ प्रदान कर, एक धर्म-धुरन्धर आचार्य-के पास जाकर चारित्र अङ्गीकार कर लिया। अहा! कैसा

निर्मल जीवन! कैसा अद्भुत और भव्य आचरण! कैसी उच्च और उदार वृत्ति है!

एक दिन विहार करता हुआ वह पाटलीपुत्र नगरमें आया। वहाँ पूर्वोक्त पण्डिता नामकी कुटनी बुढ़िया देवदत्ता नामकी एक वेश्याके घर रहती थी। वह प्रतिदिन उस वेश्याके सामने सेठ सुदर्शनकी प्रशंसा किया करती थी। इससे वह वेश्या कुढ़ जाती और कहने लगती थी, कि यदि वह किसी दिन यहाँ आवे,तो मैं मानूँ, कि वह ऐसा आदमी होगा। इतनेमें पण्डिताने सुना, कि सुदर्शन नामके मुनि यहाँ आये हुए हैं। सुनते ही वह कपटी श्राविका बनी हुई मुनिकी वन्दना करने आयी और बड़ी आरज़ू-मिन्नत करके उन्हें पारणा करनेके बहाने देवदत्ताके घर ले आयी। सरल-स्वभाव मुनिने उसका कपट नहीं पहचाना और उस रण्डीके घर चले आये। ज्योंही वे उसके घरके भीतर पहुँचे, त्योंही वह वेश्या बाल बाँध और शृङ्गार करके उनके सामने आयी तथा नाना प्रकारके उपसर्ग करने लगी। पर जो धर्मकी बड़ी यूनिवरसिटीकी सबसे ऊँची परीक्षा पास कर चुका है, उसे यह नीच वेश्या भला कहाँ तक डिगा सकती है? वह वेश्या दिन भर उसे अपने विलास-भरे वाक्यों, हाव-भावों, नज़रों-अदाओं, अङ्ग-स्पर्श, वाक्प्रहार और अन्तमें यष्टि-प्रहार तक करके हार गयी; पर जैसे आँधीके ज़ोरसे पर्वत नहीं हिलता, वैसे ही उसकी हज़ार चेष्टाओंसे भी वह क्षणमात्र चलायमान नहीं हुए। अन्तमें लाचार होकर उस वेश्याने

उन्हें सन्ध्याके समय छोड़ दिया। वहाँसे चलकर वे सीधे श्मशानमें कार्योत्सर्ग करनेके निमित्त चले गये। वहाँ कायोत्सर्ग करके टिके हुए मुनि पर व्यन्तर-गतिको प्राप्त हुई रानी अभयाने भी बहुत कुछ डिगानेकी चेष्टा की। उसने तरह-तरहके विषधर जन्तुओंका रूप धारण कर कुच-कुम्भ आदिके स्पर्शसे तथा आलिङ्गन आदिके द्वारा उन्हें चारित्र-भ्रष्ट करनेका प्रयत्न करनेमें कोई कसर नहीं रखी; पर मुनिने मानों मेरु-पर्वतसे ही धैर्यकी शिक्षा ग्रहण की थी, इसीलिये उनके किसी रोममें भी विकार नहीं पैदा हुआ। अन्तमें अनुकूल उपसर्ग करते-करते जब वह हार गयी, तब प्रतिकूल उपसर्ग करने लगी। उसने बड़े-बड़े नुकीले अस्त्र-शस्त्र चलाये, आँधी-तूफान चलाया, धूल बरसायी, मूसलधार वर्षा उत्पन्न की तथा विकराल सिंह, हाथी और सर्प आदिके भयानक रूप बनाकर उन्हें पीड़ा पहुँचानेसे भी बाज़ नहीं आयी; परन्तु उसके ये उपसर्ग भी महात्मा मुनिके लिये उपकारक ही हो गये। उनकी ध्यान धारा अधिकाधिक बढ़ने ही लगी। ऐसे सङ्कटोंमें पड़कर भी उन्होंने आत्माकी उच्च भावनामें अपने मनको लगाये रखा। वह यही सोच रहे थे, कि—"हे चेतन! इससे कहीं बढ़कर अनन्त गुनी वेदनाएँ तुमने परतन्त्र होकर अनन्त काल तक सहन की हैं। इसलिये इस समय स्वतन्त्र होकर कुछ कालके लिये यह सङ्कट भी सहन कर लो; बस तुम्हारा काम बन जायेगा। ऐसा करनेसे तुम्हारी भव-भ्रान्ति भस्म हो जायगी। आत्म-साधकोंके

लिये अपकार भी उपकारके ही समान हो जाते हैं। यह वेश्या मेरे ऊपर उपसर्ग नहीं, बलिक उपकार ही कर रही है।"

इसी प्रकार उत्तम शुभ ध्यानमें पड़कर शुद्ध ध्यानकी श्रेणी पर आरोहण कर, सुदर्शन मुनिने समस्त घाती कर्मोंका क्षय कर, उसी समय केवलज्ञान प्राप्त किया; निर्लज्ज व्यन्तरी भी लज्जित होकर ~ देवताओंने आकर तुरन्त ही केवल महोत्सव किया। पाठको! देखा आपने? इन्हें कैसी अद्भुत विजय प्राप्त हुई। बस, सङ्कटसे ही तो विजय प्राप्त होती है।
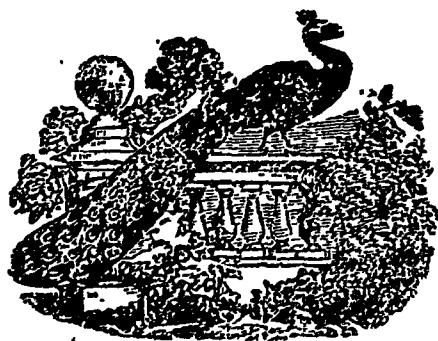
नवाँ परिच्छेद

धर्मोपदेश

महात्मा सुदर्शनके केवल-ज्ञान प्राप्त कर लेनेपर देवताओंने सुवर्ण-कमलकी रचना की। वहाँ उपस्थित देवताओं और मनुष्योंकी सभाके सामने ही केवली भगवान्‌ने इस प्रकार धर्मोपदेश देना शुरू किया,—"हे भव्य प्राणियो!

"धम्मो मंगलमुक्किट्ठं अहिंसा संयमो तवो।
देवावि तं नमंसंति, जस्स धम्मे सया मणो॥१॥"

अर्थात्—"धर्म्म उत्कृष्ट मंगलका रूप है। इसके अहिंसा, संयम और तप इत्यादि अनेक भेद हैं। देवता भी इसे नमस्कार करते हैं।"

किसी सामान्य लाभदायक कार्यमें भी टालमटोल करनेसे मनुष्यको अनेक बार हानि उठानी पड़ती है; फिर धर्म जैसे सारी कामनाओंको पूरा करनेवाले कार्यमें ढील-ढाल करना—उसकी आराधनामें विलम्ब करना आप-से-आप अपने अभीष्ट-लाभसे

विमुख होना है। कल्पवृक्ष और चिन्तामणि तो मिल भी जाते हैं, पर इस संसारमें धर्मकी प्राप्ती बड़ी ही दुर्लभ है। दान, शील, तप और भाव आदि धर्मके अनेक भेद-प्रभेद हैं। अहिंसा धर्मका मूल भेद है। इसके योगसे अन्य सब भेद भी चरितार्थ हो जाते हैं। हे भव्य प्राणियो! जबतक इस देहमें साँस आती-जाती है और होशोहवास बने हुए हैं, तभीतक धर्म कर लेना अच्छा है।"

इस प्रकारका धर्मोपदेश श्रवण कर बहुतेरे भव्य जीवोंको प्रतिबोध प्राप्त हुआ। उस समय अभया व्यन्तरीने भी प्रतिबोध लाभकर बार-बार अपने अपराधके लिये क्षमा माँगी। देवदत्ता तथा पण्डिता भी प्रतिबोध पाकर श्राविका बन गयीं। उन सबने भी अपने पिछले दुष्कर्मपर पश्चात्ताप प्रकट करते हुए क्षमा माँगी। हृदयकी कोमलता ही धर्मकी भव्य भूमिका होती है। मनकी स्वच्छतासे धर्मका पोषण होता है और जहाँ तक बढ़ी-चढ़ी हुई उदारता तथा विशालता होती है, वहाँ तक धर्मका भी विस्तार होता है। बस मानव-जीवनमें अनुपम शीलव्रत एक बड़ी भारी जागती हुई ज्योति है। प्यारे बन्धुओ! तुम अपने जीवनको इस जागती ज्योतिके साथ जोड़ दो।

कुछ दिन बाद सुदर्शन केवलीने वसुधापर विहार करते और अनेक योग्य जीवोंको धर्मका दान करते हुए अनन्त सुखधाम आत्माराम-रूप मोक्षधाम प्राप्त कर लिया।

ॐ शान्तिर्भवतु

शान्तिके समय मनोरञ्जन करने योग्य
हिन्दी जैन साहित्य की

सर्वोत्तम पुस्तकें

आदिनाथ चरित्र ।

इस पुस्तकमें जैनोंके पहले तीर्थङ्कर भगवान आदिनाथ स्वामीका सम्पूर्ण जीवन-चरित्र दिया गया है, इसको साद्यन्त पढ़ जानेसे जैनधर्मका पूर्ण तत्त्व मालूम हो जाता है, भाषा भी ऐसी सरल शैलीसे लिखी गई है, कि साधारण हिन्दी जानने वाला बालक भी बड़ी आसानीके साथ पढ़ सक्ता है, सचित्र होनेके कारण पुस्तक खिल उठी है, जैन समाज में आजतक ऐसी अनोखी पुस्तक कहीं नहीं प्रकाशित हुई, अगर आप ऋषभदेव भगवान का सम्पूर्ण चरित्र पढ़नेकी इच्छा रखते हैं। अगर आप जैन धर्मके प्राचीन रीति रिवाजों को जानना चाहते हैं। अगर आप अपनेको उपदेशक बनाकर समाज का भला करना चाहते हैं। अगर आपको सन्तान को जैन धर्मकी शिक्षा प्रदान करना करना चाहते हैं। अगर आप लोक-परलोक साधन करना चाहते हैं। अगर आप धर्म क्रियाके समय शान्ति का

आश्रय लेना चाहते हैं। तो इस पुस्तक को मंगवाने के लिये आज ही आर्डर दीजिये। मूल्य सजिल्दका ५) अजिल्दका ४) डाकखर्च पृथक्।

शांतिनाथ चरित्र

इस पुस्तकमें जैनोके सोलहवें तीर्थङ्कर भगवान शान्तिनाथ स्वामीका चरित्र (संपूर्ण बारह भवोंका) मय चित्रोंके दिया गया है। इस पुस्तकका संस्कृत पुस्तकसे हिन्दी अनुवाद किया गया है। अगर आप प्राचीन घटनाओंको नवीन औपन्यासिक ढङ्गपर, पढ़नेकी इच्छा रखते हैं, अगर आपको शान्ति का अनुसरण करना है, अगर आप सामायिक पौषध आदि धर्म क्रियाके समय ज्ञान-ध्यान करना चाहते हैं, तो इस पुस्तक को अवश्य मँगवाइये।

बड़ी खूबी—

यह की गई है, कि प्रत्येक कथापर एक एक हाफटोन चित्र दिया गया है, जिनके अवलोकन मात्रसे मूलका आशय चित्तपर अंकित हो आता है। जैन संप्रदायमें यह एक नयी बात की गई है।

स्त्रियोंके लिये—

यह ग्रन्थ अतीव उपयोगी एवं शिक्षाप्रद है. अगर आप अपनी स्त्रियोंके हृदयमें उदारता, क्षमता, आदि गुणों का समावेश कराना चाहते हैं, अगर आप अपनी पुत्रीको शिक्षिता

करना चाहते हैं, अगर आप अपनी पुत्रीको अपने संप्रदायमें ही दृढ़ रखना चाहते हैं, अगर आप अपनी पुत्रियोंसे, अपनी बूढ़ी माताओं को धर्मोपदेश प्रदान करवाना चाहते हैं, अगर आप अपनी पुत्रियोंको सुलक्षणा करना चाहते हैं, तो इस पुस्तकको अवश्य मँगवाकर पढ़ाइये। इस ग्रन्थकी हिन्दी भाषा भी ऐसी सरल शैलीसे लिखी गई है, कि साधारण हिन्दी लिखने पढ़नेवाली बालिका भी अतीव सरलता से पढ़ सकती है, एक समय हमारी बातपर विश्वासकर कमसे कम एक पुस्तक अवश्य मँगवाकर अपनी स्त्रियोंको दीजिये; अगर आपको हमारी बात प्रमाणित मालुम हो जाय तो दूसरी पुस्तक मँगवाइये। मूल्य रेशमी सुनहरी जिल्द ५) अजिल्द सादा कवर ४) डाकखर्च अलग।

अध्यात्म अनुभव योग प्रकाश

इस पुस्तकमें योग सम्बन्धी सर्वविषयोंकी व्यक्तता की गई है, योगके विषयको समझानेवाली, हिन्दी साहित्यमें आजतक ऐसी सरल पुस्तक कहीं नहीं प्रकाशित हुई। इस पुस्तकमें हठयोग तथा राजयोगका साङ्गोपाङ्ग वर्णन, चित्तको स्थिर करने आदिके उपाय ऐसी सरल शैलीसे लिखे गये हैं, जिन्हें सामान्य बुद्धिवाला बालक भी बड़ी आसानीके साथ समझ सकता है, इस ग्रन्थ-रत्नके कर्त्ता एक प्रखर विद्वान् जैनाचार्य हैं, जिन्होंने निष्पक्षपात दृष्टिसे प्रत्येक विषयोंको खुब अच्छी तरह खोल-खोल कर समझा दिया है। पाठकोंसे हमारी

विनीत प्रार्थना है, कि एक वार हमारी बातपर विश्वास कर एक प्रति अवश्य मँगवावें। अगर आपको हमारी बात पर प्रतीति हो जाय तो फिर अपने इष्ट मित्रोंसे भी मँगवानेके लिये प्रेरणा करें। मूल्य अजिल्द ३॥) सजिल्द ४॥)

सती शिरोमणी

चन्दनबाला।

इस पुस्तकमें सुश्राविका सती-शिरोमणी चन्दनबाला का चरित्र बड़ीही मनोहर भाषामें लिखा गया है, चन्दनबाला को सतीत्व की रक्षा करने के लिये जो-जो विपत्तियें सहनी पड़ी हैं और सतीत्व के प्रभाव से उनके जीवनमें जो-जो घटनायें हो गई हैं, सो इस पुस्तकमें खुब अच्छी तरह खोल-खोल कर समझा दिया गया है! जैनी व अजैनी सबको यह पुस्तक देखनी चाहिये। सतीशिरोमणी चन्दनबाला की जीवनी प्रत्येक कुल लक्ष्मीयों को पढ़ना चाहिये। बालक, स्त्री, पुरुष सभी इस पुस्तकको पढ़ कर मनोरञ्जन और शिक्षा लाभ कर सकते हैं। सारी पुस्तक उपन्यासके ढंगपर लिखी गई है, जिससे पढ़ने में अधिकाधिक आनन्द आता है। और पाठकको पढ़ने में ऐसा जी लगता है, कि पुस्तक छोड़ते नहीं बनती। आपने चन्दनबाला का चरित्र और कहीं पढ़ा सुना भी होगा; पर हम दावेके साथ कहते हैं

कि ऐसा सरल और सर्वाङ्ग सुन्दर चरित्र आपने कहीं नहीं पढ़ा होगा। अतः पाठकों से हमारा निवेदन है, कि हमारी बात पर विश्वास कर एक प्रती अवश्य मँगवावें।

पुस्तक की छपाई सफाई बड़ी ही नयनाभिराम है। एण्टीक काग़ज पर सुन्दर सुवाच्य अक्षरोंमें छापी गई है। इस के अतिरिक्त स्थान-स्थानपर नयनानन्दकर उत्तमोत्तम छ चित्र दिये गये हैं, जिनसे सारी पुस्तक खिल उठी है। जैनसंप्रदाय में यह एक नवीन शैली निकाली गई है! अवश्य देखिये, यह पुस्तक अपने ढङ्ग की पहली है। मूल्य ॥=) डाक खर्च अलग।

नल-दमयन्ती

इस पुस्तकमें नल और नमयन्तीकी जीवनी मय चित्रों के दी गई है, अधिकांश तो इस पुस्तक में पतिव्रता-धर्म-सूचक ज्ञानका भण्डार भर दिया गया है, इसको पढ़ कर स्त्रियों को अपने आपेका ख़याल हो आता है। इस पुस्तक को प्रत्येक बालक, युवा और वृद्ध नारियोंको अवश्य देखनी चाहिये; संसार में नल-दमयन्तीकी जीवनियाँ अनेकानेक प्रकाशित हो चुकी हैं, पर आजतक जैनाचार्यकी कलमसे लिखी हुई पुस्तक कहीं नहीं प्रकाशित हुई, अतएव पाठक और पाठिका-ओंसे हमारा सानुरोध निवेदन है, कि एक बार इस पुस्तकको मँगवाकर, आवश्य देखें। मूल्य ॥) डाकखर्च अलग।

सुदर्शन चरित्र

इस पुस्तक में सुदर्शन शेठ का चरित्र दिया गया है, जैन समाज में ऐसा कोई पुरुष न होगा जिसने सुदर्शन शेठका जीवन न सुना हो। ब्रह्मचर्यव्रत पर सुदर्शन शेठकी कथा सु-प्रसिद्ध है, शील को बचानेके कारण सुदर्शन शेठ को असह्य विपत्ति का सामना करना पड़ा। पूर्व के महापुरुषों ने शील को रक्षा के लिये प्राणत्याग करना स्वीकार किया; पर शीलको त्यागना नहीं स्वीकार किया, इसी विषय पर सुदर्शन शेठके जीवनमें अनेकानेक घटनायें हो गई हैं, जिनके पढ़नेसे प्रत्येक नर नारी को अपने शीलके विषय में ख़याल हो आता है। अगर आप अपनी समाज में लोगों को कुसङ्ग से बचाना चाहते हैं। अगर आप अपनी समाज में शील का महत्त्व बतलाना चाहते हैं, तो इस पुस्तकको अवश्य मँगवाईये। मूल्य ॥✓) डाकखर्च अलग।

कयवन्ना सेठ

इस पुस्तकमें कयवन्ना सेठ की जीवनि दी गई है। सचित्र होने के कारण कयवन्ना सेठ की अनोख घटना आँखों के सामने दिख आती है। चारित्र सुधार के विषय में यह पुस्तक अतीव लाभदायक हैं। दूर्जन और सज्जन-पुरुषो के संसर्गसे मनुष्य को क्या-क्या लाभ और क्या-क्या हानि

याँ उठानी पड़ती हैं। इसी विषय पर कयवन्ना के जीवनमें अनेकानेक अज घटनायें हो गई हैं, जिसके पढ़ जाने से मनुष्य मात्र को, आपेका ख़याल हो आता है। अगर आप अपने पुत्र को चारित्र सुधार की शिक्षा प्रदान करना चाहते हैं। अगर आप अपने पुत्रको सदाचारि बनाना चाहते हैं, तो इस पुस्तक को अवश्य मङ्गवाईये। मूल्य ॥) डाक खर्च अलग।

रतिसार कुमार

इस पुस्तक में रतिसार कुमार का चरित्र अतीव सरल और सुन्दर भाषा में लिखा गया है। प्रत्येक नर नारी को इस पुस्तक को अवश्य देखनी चाहिये। पुस्तक की छपाई सफाई बड़ी ही नयनाभिराम है चित्रों के कारण रतिसार कुमार का चरित्र अपनी आँखों के सामने दिख आता है। मूल्य ।॥) डाक खर्च अलग।

पुस्तकें मिलनेका पताः—

पंडित काशीनाथ जैन,

नरसिंह प्रेस, २०१, हरिसन रोड, कलकत्ता